Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

जैविक विविधता की आवश्यकता एवं महत्व

डॉ. विनय कुमार
प्रो. और अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

सारांश :– दुनिया में कुल कितनी प्रजातियाँ हैं यह ज्ञात से परे है, लेकिन एक अनुमान के अनुसार इनकी संख्या 30 लाख से 10 करोड़ के बीच है। विश्व में 14,35,662 प्रजातियों की पहचान की गयी है। यद्यपि बहुत सी प्रजातियों की पहचान अभी भी होना बाकी है। पहचानी गई मुख्य प्रजातियों में 7,51,000 प्रजातियाँ कीटों की, 2,48,000 पौधों की, 2,81,000 जन्तुओं की, 68,000 कवकों की, 26,000 शैवालों की, 4,800 जीवाणुओं की तथा 1,000 विषाणुओं की हैं। पारितंत्रों के क्षय के कारण लगभग 27,000 प्रजातियाँ प्रतिवर्ष विलुप्त हो रही हैं। इनमें से ज्यादातर ऊष्णकटिबंधीय छोटे जीव हैं। अगर जैव–विविधता क्षरण की वर्तमान दर कायम रही तो विश्व की एक–चौथाई प्रजातियों का अस्तित्व सन् 2050 तक समाप्त हो जायेगा।

प्रस्तावना :– एक समय था जब कि पृथ्वी पर कृषि व्यवस्था तथा उसमें उत्पादित होने वाले खाद पदार्थ की मात्रा अथाह थी। लेकिन आज उस स्थिति में परिर्वतन आ गया है। और वह जब पर्याप्त की श्रेणी में आ जाता है। संतोष यही है। कि यह सामग्री पुनः प्राप्त की जा सकती है। अतः यदि बुध्दि मत्ता से उत्पादन का प्रबन्धन हो तो पूरे विश्व में रहने वाले प्राणी वर्ग को उसके खाने पीने और अन्य पदार्थो की पूर्ति की जा सकेगी। पर इसके लिए प्राकृतिक विविधता का उपयोग करना होगा जिसें आज हम जैविक विविधता के नाम से नामित करते है। प्रारम्भ में विश्व में खाघान्न की कमी को पूरा करने के उद्देश्य से हरित क्रान्ति की कल्पना की थी जिसें 1968 में संयुक्त राज्य के कृषि विभाग के निदेशक विलियम गैड ने नाम दिया था। उन्होंने पाया कि अन्न की विशेष जाति से है भारत और पाकिस्तान में गेंहूँ तथा फिलीपाइन्स में चावल का अधिक उत्पादन हुआ है। बाद में भारत में पॉच मुख्य खाघान्न गेंहूँ, चावल, मक्का, बाजारा और ज्वार पर शोध कर अधिक उत्पादन वाली किस्म तैयार की। वस्तुतः यही कृषि क्षेत्र में विविधता कहलाई। पर शनैः–शनैः यह जाना जाने लगा कि यह विविधता सभी सजीव पदार्थों व वस्तुओं में है। और प्रगति के लिए इसका सम्भव है। तभी से जैविक विविधता की उपयोग को प्रयोग में लाया जाने लगा।

जैविक विविधता और उसका कार्यक्षेत्र :– जैविक विविधता के विषय में एक संक्षिप्त विवरण प्रस्तावना में प्रस्तुत किया गया है। और साथ ही इसकी एक अधिकृत परिभाषा भी दी गई है। इससे यह तो स्पष्ट है कि (जैविक विविधता एक समूहवाची शब्द है जिससे पृथ्वी के सभी प्रकार के सजीव प्राणी पौधे, प्राणी, पशु सुक्ष्म जीव जन्तु समाहित है। वस्तुतः इसमें प्रजातियों के अन्तर्गत के बीच तथा परितंत्र की विविधताएँ साम्मिलित है।)

अतः जब भी हम विविधता की बात करते है। तब हम पूरे पृथ्वी के परितत्रों (स्थलीय जलीय और वायुमण्डलीय) के अन्दर के समस्त सजीव और निर्जीव वस्तुओं के परस्पारिक व्यवहार की बात करते है। इस विविधता मेंजीने के लिए यथेष्ट भोजन, पानी, वायु, कपडा मकान की प्रचुरत उपलब्ध कराई है। तथा अनेक प्रकार की सांस्कृतिक विविधता को जन्म दिया है। कुछ विशेष यहॉ तक कहते है, कि यदि जैविक विविधता को आज के वर्तमान युग में नहीं देखा जाता तो शनैः शनैः परम्पराएँ रीति रिवाज और अनेक प्रकार की पारम्परिक गतिविधियॉ ही समान्त हो जाती है। और इस पृथ्वी के समस्त प्राणी वर्ग अतन्त कठिन को भुगतते हुए न आने लिये कुछ जुटा पाते और ना आने वाली कुछ पींडियों के लिये कुछ छोडतें। जैविक विविधता के विशिष्ट योगदान को यहॉ बिन्दुवार समेकित किया गया है (यधपि इनका विस्तृत विवरण आगे इसी अध्याय में और दिया गया है।)

1. भोजन पानी औषधियों तथा उघोंगों के लिये कच्चा सामान
2. पानी की स्वच्छता
3. मिटटी की पुनः संरचना तथा उसके उपजाऊपन का नियंत्रण और रखाव
4. जलीय क्षेत्रों की सुरक्षा
5. अधिक ताप का नियंत्रण
6. वायुमण्डल का रखरखाव आदि।

इनसे हम निष्कर्ष तो निकाल ही सकते है कि जैविक विविधता हमारें जीवन के हर क्षेत्र में नितान्त उपयोगी है। जैविक विविधता की विश्वस्तर पर महत्ता को स्वीकारते हुये संयुक्त राष्ट्र ने एक विशेष सत्र का

1992 में आयोजित रीओ– डी– जैनीरो में किया गया था। उसमें सभी आवश्यक विषय वस्तु का विश्लेषण कर एक प्रतिवेदन के रूप में प्रसारित किया गया। यह प्रतिवेदन विशेषतः (1) जैविक विविधता क्यों (2) जैविक विविधता की योजना और कियान्विति (3) जैविक विविधता की उपयोगिता (4) जैविक विविधता के कियान्वयन में सहयोग और भागीदारी तथा (5) विशिष्ट शब्दावली के स्पष्टीकरण को सार्वभौमिक उपयोग हेतु प्रस्तुत किया गया है। यह भी अपेक्षा की गई है। कि सभी देश अपने अपने स्तर पर जैविक विविधता की योजना तैयार कर उसका सफल कियान्वयन करें।

जन सामान्य के लिए जैविक विविधता :– भारत में ही नही बल्कि विश्व मे अनेक देश जैविक विविधता की शब्दावली से परिचित बहुत अल्प समय पूर्व ही हुये। उस पर भी विडबना यह कि वहॉ का सामान्य आदमी इसके बारे में कुछ नही जान सका। जिन देश में (विकसित देशों को छोडकर) इसे जानने की प्रयास किया गया वहॉ भी यह केवल रिपोर्ट सरकारी कार्यवाही कार्यदलों के गठन देशानुकूल सिफारिशें कियान्यवन रूपरेखा निर्माण तक सीमित रहा। एक अन्य सोचने योग बात यह रही कि जैविक विविधता का कार्यक्षेत्र केवल कृषि उत्पादन अथवा मछली उत्पादन तक मानकर इसे सम्बधित विभाग का कार्यक्रम बना दिया गया जबकि जैविक विविधता का कार्य क्षेत्र सभी प्रकार के (स्थलीय, जलीय, वायुमण्डलीय) सभी प्रकार के परितंत्रों का था।

अ– जैविक विविधता की आवश्यकता एवं महत्व :– व्यावहारिक जीवन में जैविक विविधता के महत्व व आवश्यकताओं को साधारणतः क्रमबद्ध करना कठिन है क्योंकि यह प्राणी मात्र के जीवन के हर क्षेत्र को किसी न किसी प्रकार लाभ पहुॅचाता है। और वस्तुत हमें स्वस्थ सुखी प्रसन्नचित और स्फूर्तिमय रखता है। दैनिक जीवन के आधार पर एक सूची यहॉ इसी क्रम में प्रस्तुत है।

1. हम जैविक विविधता में जीते है पृथ्वी पर की सभी चीजे जो हमें निरापद रूप से मिल पाती है। उसका श्रेय जैविक विविधता को जाता है। पीने योग्य पानी स्वच्छ वायु उपजाऊ मिटटी जिससे हमे अन्न मिलता है इसी की देन है। पेडों से ऑक्सीजन का मिलना फैक्ट्रीज से निकली ऑक्साइड को आत्मसात करना घर और और कार्यालय को शुद्ध हवा उपलब्ध कराना खेंतो में अनेक जीवों से उन को सुरक्षित रखना अनेक कीडे मकोंडों की सहायता से मिटटी को उपजाऊ बनाना आदि विविध कार्य जैविक विविधता की महत्ता को ही बताते है। एक प्रकार से हम यह कह सकते है। कि यह हमें सुखमय जीवन के विभिन्न आयामों का स्त्रोत केन्द्र है।

2. खाने पर हमें जैविक विविधता मिलती है खाने कि मेज पर उपलबध भोज्य सामग्री (अन्न, मॉस, मछली, अण्डे) दूध, दही, आइसक्रीम, फल, सब्जियॉ अचार और अन्य सामग्री सभी प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से जैविक विविधता का प्रतिफल है खेंतों से आहार पशुओं से दूध, समुद्र से मॉसाहारी पदार्थ, मुर्गियों से अण्डें आदि जीव विविधता से निरन्तर मिलती रहती है। जैविक विविधता गुणवत्ता बनाये रखती है।

3. जैविक विविधता हमें स्वस्थ रखती है जैविक विविधता का एक और महत्वपूर्ण योगदान इसके द्वारा प्रतिपादित जंगल और वन्य प्रजाति से सम्बधित है। वह है कि यह हमें स्वस्थ रखती है। एक समय था जब कि विश्व की शत –प्रतिशत औषधियॉ केवल पेड़–पौधो अथवा विभिन्न पशुओ और जीव जन्तुओं से प्राप्त होती थी और आज से कोई 50 वर्ष पूर्व भी कोई 3 अरब मनुष्य जंगली जडी बुटियों और उनसे निमिर्त विभिन्न दवाइयों पर ही आधारित थे आज भी अनेक पोधों के बावजूद इन विविध प्रजातियों को नकारा नही गयां चीन 5100 प्रजातियों, अमेरिका में 3000 प्रजातियों का आज भी उपयोग एन्टीबायोटिक तथा अन्य दवाइयों में प्रयोग होता है। भारत में तो पूरा आर्युविज्ञान उपचार प्रणाली इन धरेलु और इन जंगली पेड पौधों पर आधारित है। अनेक एलोपेथिक उपचारों में केवल नाम अंग्रेजी के है। जबकि दवाईयों में अर्न्तवस्तु सभी सामान्य पौधों के सत्व है। निश्चित ही यह प्रभावी उपचार प्रणालियॉ जैविक विविधता की पहचान कराती है।

4. जैविक विविधता हमें भोजन आवास कपडा उपलब्ध कराती है किसी भी देश की कृषि केवल अन्न उपजाने तथा अन्न उपजाने के साध्य ही नही है। बल्कि इसके साथ साथ यह जैविक विविधता के भण्डार भी है। जिनकी सुरक्षा और संरक्षण से ही हम रह पा रहें है, और जी पा रहें है। आवास हेतु लकडी कपडों हेतु रूई ऊन में अन्य पदार्थ और पेट भरनें हेतु अनेक प्रकार के अन्न, फल, सब्जियॉ, मॉस, मछली, दूध, क्रीम और इन सभी की अनेकानेक किस्में जैविक विविधता की ही देन है।

5. जैविक विविधता परिस्थितिकी तंत्र को स्थायित्व प्रदान करती है किसी भी आबादी तथा प्रजाति का अस्तित्व तथा विशेष में निर्जिव वस्तुओं से इनकी पारस्परिक सक्रियता से सम्भव है। जिससे उनके परिस्थितिकी तंत्र स्थिरता से सुनिश्चित होती है। जैविक विविधता इन सभी परिस्थितिकी तंत्रो को नियमित रूप से चलते रहने में और उसका स्थायित्व प्रदान करने की महती भूमिका निभाती है।

6. जैविक विविधता हमारे व्यक्तित्व में नयापन लाती है हमारी परस्पारिक गतिविधियों में विविधताओं की समविष्टि ने मनुष्य के जीवन में अनेक परिर्वतन किये है। केवल भोजन आवास और कपडा ही नही बल्कि आमोद प्रमोद की विविधताओं रीति रिवाजों में से पारम्परिक एकाकीपन का अलगाव रहने सहने के नये रंग ढंग स्वास्थ और स्वाच्छ जीवन शैली की पद्धति वार्त्तालाप का उलासित और उमंग भरा तरिका आदि सभी ने मनुष्य के व्यक्तित्व में एक एसा नया पन ला दिया है। जिससे जीवन दर्शन का स्वरूप प्रसन्तामय, सुखमय और शान्तिपूर्ण हो गया है अप्रत्यक्ष रूप से यह सब जैविक विविधता के फलस्वरूप ही है।

इनके अतिरिक्त भी जैविक विविधता का योगदान हम निम्न प्रकार भी पाते है–

1. जैविक विविधता हमें पारम्परिक शैलियों से सम्बन्ध जोडें रखती है।
2. जैविक विविधता हमारी आर्थिक सम्पन्नता में वृद्धि करती है।
3. जैविक विविधता हमें आश्चर्य में डालती है।
4. जैविक विविधता हमारी ग्रह की सुरक्षा करती है।
5. जैविक विविधता हमारी पृथ्वी को स्वच्छ रखती हैं।
6. जैविक विविधता हर क्षेत्र में वृद्धि करती है।

इस प्रकार जैविक विविधता की अवश्यकता और उसके महत्व को हम किस स्तर तक स्वीकारते है यह हमारा अपना दृष्टिकोण है।

ब–जैविक विविधता की सुरक्षा और संरक्षण के लिये वांछनीय कार्य :– जन साधारण और उनके परिवारों के सभी सदस्यों को जैविक विविधता के महत्व को समझना चाहिए। अतः यह आवश्यक है कि उनके प्रति दिन के कार्यकलाप चाहे वह घर में हों चाहे बाहर चाहे शहर में शापिंग को जाये अथवा पर्यटन में चाहें जगते हो या सोते हो इस उद्देश्य से सम्पन्न हो कि जैविक विविधता हानि नष्ट न हो दुरूपयोंग न हो क्योंकि कोई गलत कार्य व्यहार अप्रत्यक्ष ही कई असाधारण हनि कर सकता है।

1. अपने घर के बगीचे को जैविक विविधता का साधारण सा संरक्षण केन्द्र बनायें (यथासम्भव स्थानीय पौंधों को महत्व दें)
2. पानी का बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करें रिसतें नालों को रोंके लॉन हतोत्साहित करें (बचे पानी से डेम भरे जा सकते है जिससे अधिक जरूरत का उत्पादन हो सकता हैं)।
3. घर के कटे टूटे वृक्ष झाडियों को यू न रहनें दे (यह पक्षियों के आवास स्थल बनगें)।
4. अपने घर तथा आस पडोस के स्थान तथा रास्ते और सडकों पर उग रहें जंगली पौधों को रहने दे (इनमें असंख्य जैविक विविधता भरी पडी है जिन्हें हम जानतें नही सम्भव है। इनमे अनेक औषधीय पौधें हो)।
5. खरीददारी करते समय अनचाहें पेंकिग कि औपचारिकता से बचें आखिर घर पर आकर इन्हे डस्टविन में डाल देंगें (प्राकृतिक संसाधन बचेंगें तो जैविक विविधता संरक्षित होगी)।
6. प्लास्टिक थैले का उपयोंग ना करें (यह घरों में संस्थाओं में ड्रेनेज को रोकेगी नदियों में अन्य जल स्त्रोंतों के जानवरों के जाने लेगी वस्तुत जैविक विविधता के सामान्य चक्र में बाधा डालेगी)।
7. स्थानीय दवाओं का प्रयोग करें जी मचलने में अमृतधारा, एण्टीसेप्टि, लोशन के लिए नमक और फिटकरी, खून राकने के लिये, हल्दी खांसी के लिए, आडूसा के पत्तों का रस आदि (जैविक विविधता का इससे अच्छा उपयोग क्या हो सकता है।)
8. पुनः चक्रीय कागजो का पुस्तक कापियॉ तथा ऑफिस कार्यो में उपयोग करें (लाखों पेडों को बचाना और मिलियन्स घन मीटर का पानी की बचत सम्भव है।)
9. घर में वृक्षों में गिरी पत्तियों से खाद बनाइए (यह अच्छी गुणवत्ता की भी होगी और पैसों की बचत होगी)
10. मिटटी की सुरक्षा कीजिए इसे बरसाती पानी अथवा अन्य प्रकार से बह रहे जल के साथ जाने से रोकिये मिटटी बाधनें वाले पौधे लगाइये (एक चम्मच पर मिटटी का अरबों खरबो बैक्टीरिया तथा सूक्ष्म जीव हो सकते है जिनसें पूरे देश की भोजन समस्या हल करने के लिए अन्न उपजाया जा सकता है।) इनमें हम यह निष्कर्ष निकाल सकते है कि जैविक विविधता के मुख्य आधार (1) जल (2) मिटटी (3) पौधें या वानिस्पतिक तथा (4) बैक्टीरिया और सूक्ष्म जीव है जिसमें प्राणी मात्र का सुखमय जीवन सम्भव हैं।

वन एव पर्यावरण मंत्रालय भारत सरकार द्वारा जैविक विविधता का संरक्षण :– पर्यावरण एवं विकास की समस्या के निवारण तथा अनेक प्राणी जगत की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतू जिसमें प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण और उनके सतत उपयोग को उच्च प्राथमिकता दी गई है भारत सरकार के वन एव पर्यावरण के मंत्रालय के कई कार्यक्रमों को स्वीकृति देकर उन पर क्रियान्वयन प्रारम्भ किया है। प्रत्येक कार्यक्रम में भविष्य में अन्तर क्रमवार वृद्धि किये जाने का भी प्रावधान रखा गया है। जिससें कार्यक्रम में ना तो कोई शिथिलन आये और न ही उसकी वृद्धि में रोक हो।

जैविक विविधता की सुरक्षा एव संरक्षण के लिये जन साधरण की भूमिका :– जनसाधारण में और उनके परिवार के सभी सदस्यों को जैविक विविधता के महत्व को समझना चाहिए। अतः यह आवश्यक है। कि उनके प्रतिदिन के कार्यकलाप चाहे वह चाहे घर में चाहे बाहर चाहे शहर में शोपिंग को जाए अथवा पर्यटन पर चाहे जागते हो या सोते हों इस उद्देश्य से सम्पन्न हो कि जैविक विविधता नष्ट ना हो दुरूपयोंग ना हो क्योंकि आपके कोई गलत कार्य व्यवहार अप्रत्यक्ष ही कोई असाधारण हानि कर सकता है। पुस्तक की सीमा को देखते हुए केवल बिन्दु यहॉ दिये जा रहे है विस्तार पाठक स्वंय करे।

1. अपने घर के बगीचे को जैविक विविधता का साधारण का संरक्षण केन्द्र बनायें (यथासम्भव स्थानीय पौंधों को महत्व दें)
2. पानी का बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग करें रिसतें नालों को रोंके लॉन हतोत्साहित करें (बचे पानी से डेम भरे जा सकते है जिससे अधिक जरूरत का उत्पादन हो सकता हैं)।
3. घर के कटे टूटे वृक्ष झाडियों को यू न रहनें दे (यह पक्षियों के आवास स्थल बनगें)।
4. अपने घर तथा आस पडोस के स्थान तथा रास्ते और सडकों पर उग रहें जंगली पौधों को रहने दे (इनमें असंख्य जैविक विविधता भरी पडी है जिन्हें हम जानतें नही सम्भव नही है। इनमे अनेक औषधीय पौधें हो)।
5. खरीददारी करते समय अनचाहे पेंकिग कि औपचारिकता से बचें आखिर घर पर आकर इन्हे डस्टविन में डाल देंगें (प्राकृतिक संसाधन बचेंगें तो जैविक विविधता संरक्षित होगी)।
6. प्लास्टिक थैले का उपयोग ना करें (यह घरों में संस्थाओं में ड्रेनेज को रोकेगी नदियों में अन्य जल स्त्रोंतों के जानवरों के जाने लेगी वस्तुत जैविक विविधता के सामान्य चक्र बाधा डालेगी)।
7. स्थानीय दवाओं का प्रयोग करें जी मिचलने में अमृतधारा एण्टीसेप्टि लोशन के लिए नमक और फिटकरी खून राकने को हल्दी खांसी के लिए आडूसा के पत्तों का रस आदि(जैविक विविधता का इससे अच्छा उपयोग क्या हो सकता है।)
8. पुनः चक्रीय कागजो का पुस्तक कापियॉ तथा ऑफिस कार्यो में उपयोग करें (लाखों पेंडों को बचाना और मिलियन्स घन मीटर का पानी की बचत सम्भव है।)
9. धर में वृक्षों में गिरी पत्तियों से खाद बनाइए (यह अच्छी गुणवत्ता की भी होगी और पैसों की बचत होगी)
10. मिटटी की सुरक्षा कीजिए इसे बरसाती पानी अथवा अन्स प्रकार से बह रहे जल के साथ जाने से रोकिये मिटटी बाधनें वाले पौधे लगाइये (एक चम्मच पर मिटटी का अरबों खरबो बैक्टीरिया तथा सूक्ष्म जीव हो सकते है जिनसें पूरे देश की भोजन समस्या हल करने के लिए अन्न उपजाया जा सकता है।)

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शर्मा, पी.डी. (2004) इकोलॉजी एण्ड एनवायरन्मेन्ट, रस्तोगी पब्लिकेशन्स, मेरठ, इण्डिया।
2. सिंह, ए. (2007) वोरहेविया डिफ्यूजाः एन ओवर–ऐक्सप्लॉयटेड प्लाण्ट ऑफ मेडिसिनल इमपॉरटेन्स इन रूरल एरियाज ऑफ ईस्टर्न उत्तर प्रदेश, करेण्ट साइन्स, खण्ड–93, अक–4. पृ. 446।
3. मेस, जी.एम. तथा स्टुअर्ट, एस. (1994), ड्राफ्ट आई यू सी एन रेड लिस्ट कटेगरीज, वरजन 2.2 स्पीसीज 21/22: मु.पृ. 13–14।
4. आई यू सी एन (1994 डी) आई यू सी एन रेड लिस्ट कटेगरीज, आई यू सी एन, इंग्लैण्ड।
5. विल्सन, ई.ओ. एवं पिटर्स, एफ.एम. (1988) बायोडाइवर्सिटी (संपादित), नेशनल एकेडमी प्रेस, वाशिंगटन डी.सी.।
6. हेवुड, वी.एच. एवं वाटसन, आर.टी. (1995) ग्लोबल बायोडाइवर्सिटी असेस्मेन्ट (संपादित), यूनाइटेड नेशन इन्वायरन्मेण्ट प्रोग्राम, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रीज, यू.के.।
7. भरुचा, ई. (2005) टेक्स्टबुक ऑफ एनवायरनमेन्टल स्टडीज, यूनिवर्सिटी प्रेस प्राइवेट लिमिटेड, इण्डिया।

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण

डॉ. भरत सिंह
प्रो. हिन्दी विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

सारांश :– मानव स्वयं पर्यावरण का एक अंग है अतः मानव के समस्त क्रियाकलाप विभिन्न परिस्थितियों में उनकी भूमिका तथा पर्यावरण संरक्षण के लिये उस द्वारा किये गये प्रयास सभी का प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगत होता है। पर्यावरण को बनाये रखना मानव का ही कार्य है। इसे सहज व सम्भालकर रखना ही मानव समाज का कर्तव्य है क्योंकि जब मानव अपनी आवश्यकता कि पूर्ति करता है तो वह भूल जाता है कि मानव पर्यावरण से खिलवाड़ करने से पर्यावरण का विनाश होता है। मानव यह भूल जाता है कि इसका परिणाम हमें भुगतना होगा। आज यह प्रत्यक्ष देखा जा रहा है कि प्रदूषण के कारण मानव स्वास्थ्य में विभिन्न बीमारियां घेरती जा रही हैं। आज एक आम बच्चा श्वांस का मरीज हो रहा है, टी वी के लक्षण आने लगे, हमें इससे बचने के लिये हमें पर्यावरण के प्रति सचेत होना पड़ेगा।

वनस्पति और पेड़ पौधों के महत्व को हिन्दू धर्म में बहुत मान्यता दी है और किसी न किसी प्रकार हर पेड़ को किसी देवी देवता अथवा मान्यता से जोड़ कर उसकी रक्षा करने का उपाय कालान्तर से बनाये रखा है। वैज्ञानिक दृष्टि से जो महत्व आज वृक्षों का बताया जाता है उससे कहीं न कहीं मानव स्वास्थ्य का लाभ जुड़ा है। मानव स्वास्थ्य सुधार के लिये पेड़ पौधे जरूरी हैं। यही पर्यावरण का विकास व सुधार ही मानव समाज को नयी युवा पीढ़ी को उन्नति की ओर ले जा सकती है।

मनुष्य का स्वास्थ्य निस्संदेह उसकी बड़ी पूंजी है क्योंकि स्वास्थ्य शरीर में ही स्वस्थ विचारों का वास होता है। स्वस्थ विचारों में रचनात्मकता, तीव्रता और तत्परता होती है, और साथ ही कुछ कर गुजरने की इच्छा ही नहीं, क्षमता भी होती हैं। स्वस्थ शरीर में ही खुशहाल मन रहता है, और एक संतुष्ट और खुशहाल मन में ही यह सामर्थ्य होती है कि वह मानव मात्र के लिए सद्भावना रख सके और बिना किसी भेदभाव के स्व्यं अपने, अपने परिवार, देश और समाज के विकास के बारे में विचार कर सके। ऐसे हालातों में कहा जा सकता हैं, कि मनुष्य का अच्छा स्वास्थ्य न केवल उसके अपने लिए बल्कि उसके परिवार, देश और समाज सभी के लिए बहुत अहमियत रखता है। इसलिए मनुष्य के स्वास्थ्य पर पर्यावरण का कुप्रभाव निश्चय ही चिंता का विषय है।

प्रस्तावना :– पर्यावरण के संबन्ध में हमें इस तथ्य पर विचार करना होगा कि पर्यावरण शब्द का अभिप्राय क्या है। आमतौर पर यह समझा जाता है कि – वायु, जल, मिट्टी और पेड़ पौधों से मिलकर पर्यावरण बनता हैं। यह सत्य है किन्तु व्यापक रुप से हम कह सकते हैं कि मनुष्य के आसपास का सारा वातावरण घर के भीतर बाहर सभी कुछ पर्यावरण का एक हिस्सा है। इसलिये यदि पानी और हवा का प्रदूषण मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये हानि कारक हो सकता है तो साथ ही घरों में इस्तेमाल होने वाली बहुत सी आम चीजें भी हमारे पर्यावरण को प्रदूषित करती हैं।

बढ़ते औद्योगीकरण और उन्नत औद्योगिकी के कारण पृथ्वी के प्राकृतिक वातावरण में व्यवधान उत्पन्न हो गया है। इस व्यवधान ने प्रकृति के स्वाभाविक सामंजस्य को असंतुलित कर दिया है और, चूँकि मानव–जीवन प्रकृति का अभिन्न अंग हैं, इसलिए बढ़ते प्राकृतिक असंतुलन ने इंसान के जीवन को भी असंतुलित कर दिया है। यह तो अविवादित सत्य है कि आज के बढ़ते औद्योगीकरण और तकनीकी विकास ने इंसान को ऐसी अति–आधुनिक सुख–सुविधाएँ प्रदान की हैं, जिनके कारण उसका जीवन अप्रत्याशित रूप से सरल और सहज बन गया है। लेकिन यह भी उतना ही सत्य है कि बढ़ते औद्योगीकरण और उन्नत औद्योगिकी के कारण पृथ्वी के प्राकृतिक वातावरण में व्यवधान उत्पन्न हो गया है। इस व्यवधान ने प्रकृति के स्वाभाविक सामंजस्य को असंतुलित कर दिया है और, चूँकि मानव–जीवन प्रकृति का अभिन्न अंग हैं, इसलिए बढ़ते प्राकृतिक असंतुलन ने इंसान के जीवन को भी असंतुलित कर दिया है। फलस्वरूप आज का बिगड़ा पर्यावरण मनुष्य के स्वास्थ्य को बहुत ज्यादा प्रभावित कर रहा है।

आज यह सत्य है कि मानव का स्वास्थ्य पर्यावरण से अत्यधिक रूप से संबंधित है। हमारे पर्यावरण के तत्व भूमि जल वायु वनस्पति एवं प्राणियों का समूह सभी मिलकर मानव को स्थिर व व्यस्थित करने एवं स्वस्थ जीवन में सहायक होते हैं। मानव

जीवन स्वस्थ हो उसके लिये स्वच्छ पर्यावरण आवश्यक है। इसका संतुलन पर्यावरण पर निर्भर करता है। पर्यावरण एक लंबे समय तक स्वच्छ संतुलित एवं क्रियाकलापों द्वारा असंतुलित होता गया है।

पर्यावरण व मानव एक साथ रहें तो पर्यावरण संतुलित बना रहेगा। पर्यावरण है तो मानव समाज है यदि पर्यावरण प्रदूषित होगा तो मानव स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ेगा। विभिन्न रोगों और बीमारियों के लक्षण दिखने लगते हैं। इससे बचने के लिये हमारे समाज में पर्यावरण के पादप जाति के पौधों से बचा जा सकता है। विभिन्न औषधीय पौधों से मानव स्वास्थ्य में होने वाले रोगों से बचा जा सकता है। हमारे धर्म ग्रंथों में इसका उल्लेख मिलता है।

अश्वस्थमेक पिचुमिंदमेकं न्याग्रोधमेक दशपुष्पजातीः।
द्वे द्वे तथा दाड़िम मातुलंगे पंचाम्ररोपी नरकं नयाति।।

अर्थात् एक व्यक्ति जो एक पीपल एक नीम एक वट दस फूल वाले पौधे अथवा लतायें दो अनार दो नारंगी और पांच आम के वृक्ष लगाता है वह नरक में नहीं जाता और सदा स्वस्थ रहता है।

प्राचीन ग्रंथों में प्राकृतिक प्रदूषण फैलाने को रोंकने के लिये तथा दोसी को दण्ड देने की व्यवस्था का विवरण भी कई स्थानों पर मिलता है प्रदूषण जितना होगा मानव स्वास्थ्य उतना ही खराब होता जायेगा।

नाप्सु मूत्रं पुरीषं वाष्ठीवनं वा समुसृजेत्।
अमेध्यलिप्तमन्यद्वा लोहितं वा विषाणु वा।।

अर्थात् किसी भी व्यक्ति को पानी में पेशाब, मल, अथवा थूकना नहीं चाहिये। किसी भी वस्तु को जो इन अपवित्र वस्तुओं, रक्त और विष से मिश्रित हो जल में फेंकना नहीं चाहिये।

अवलोकन :– आज बढ़ते औद्योगिक और तकनीकी विकास ने इंसान को ऐसी अति आधुनिक सुख सुविधाएं प्रदान की है जिसके कारण उसका जीवन अप्रत्यासित रूप से सरल और सहज बन गया है। किन्तु यह भी सत्य है कि बढ़ते औद्योगिक और उन्नत औद्योगिकी के कारण पृथ्वी के प्राकृतिक वातावरण में व्यवधान उत्पन्न हो गया हैं। जो प्रकृति के स्वाभाविक सामंजस्य को असंतुलित कर दिया हैं और चूंकि मानव जीवन प्रकृति का अभिन्न अंग हैं इसलिए बढ़ते प्राकृतिक असंतुलन ने इंसान के जीवन को भी असंतुलित कर दिया है। फलस्वरूप आज बिगड़ा पर्यावरण मनुष्य के स्वास्थ्य को बहुत ज्यादा प्रभावित कर रहा है।

मानव समूह द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया है जिससे वनों का नाश,रासायनिक उर्वरकों, कीट नाशकों, पेस्टि साइड्स का कृषि क्षेत्र में अच्छी फसल की प्राप्ति के लिये उपयोग मानव स्वास्थ्य को अत्यधिक प्रभावित किया है। आज मनुष्य अनेक रोगों से ग्रसित हो रहे हैं और मानव जीवन औषधियों पर निर्भर हो रहा है।

जनसंख्या वृद्धि के कारण भी पर्यावरण की गुणवत्ता में परिवर्तन आ रहा है। आज मानव आवश्यकताओं की वृद्धि हुई है, उसकी पूर्ति के लिये मानव अनियंत्रित प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया, इसका प्रभाव यह हुआ कि पर्यावरण प्रदूषण के कारण मानव स्वास्थ्य प्रभावित हुआ है। मानव समाज को अगर स्वस्थ रहना है तो उसे पर्यावरण में उपस्थित औषधियों का प्रयोग करना होगा। पर्यावरण को बचाने के लिये ज्यादा से ज्यादा पेंड़ लगाना होगा।

श्री रवीन्द्र नाथ टैगोर ने लिखा है –
चित्त जहां भय विहीन शीर्ष जहां उच्च रे।

ज्ञान जहां मुक्त रे, सत्य का गंभीर हो ,वाणी का उच्च रे।।

मानव स्वास्थ्य को सबसे ज्यादा खतरा प्रदूषण से है इसमें कहीं न कहीं मानव जिम्मेदार है। कुछ प्रमुख प्रभाव जो पर्यावरण पर पड़ रहे हैं।

1. वायु संरक्षण :– शुद्ध वायु में विभिन्न गैसों का अनुपात N2-78%, O2-20.95%, Ar-0.93%, Loi-0.04% व अन्य गैसें धूल के कणों व पानी के वाष्प के रूप में 0.08% आयतन के अनुसार होता है किन्तु मात्रा बढ़ती है तो प्रदूषण भी बढ़ता है और मानव स्वास्थ्य रोगों की ओर अग्रसर होता जा रहा है।

वायु से प्रदूषण के निम्न माध्यम हैं–
1– रसोई घर के धुएं से।
2– स्वचलित वाहनों के उत्सर्जन से।
3– Co2 की अधिकता से।
4– औद्योगिक संस्थानों के उत्सर्जन से।

2. **जल संरक्षण** :– आज प्राणी मात्र के जीवन के लिये वायु के बाद जल ही वह महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है जिसके बिना जीवों का रहना सम्भव नहीं है। जहां भू–मण्डल में जल के मात्रा की बात की जाय

तो विद्वानो ने बताया है कि 1460 मि.घन कि.मी. है, लेकिन यह सभी जल पीने योग्य नहीं है और न ही अन्य कार्य हेतु इसका उपयोग हो सकता है। समुद्र में खारा जल की पर्याप्त मात्रा है कुछ बर्फ के रूप में है शेष बचे जल को मानव जीवन के लिये उपयोग किया जाता है जिसे मानव स्वयं प्रदूषित कर रहा है। आने वाले समय में शुद्ध जल के लिये अनेकों समस्याओं का सामना करना होगा और बीमारियों से ग्रसित होगा।

जैसा कि हमारे धर्मशास्त्र में कहा गया है कि–

समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात्पुनाना यन्त्यनिविशमानाः।
इन्द्रो या वज्री वृषभोरराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु।।

'आकाश का जल, नदी और कुंआ का जल जिनका जल स्त्रोत सागर से है, यह सब पवित्र जल मेरी रक्षा करे।' (04)

3. **मृदा संरक्षण** :– पृथ्वी के भूपटल के ऊपरी पतली परत जो पौधे अथवा वनस्पति के उगने का प्राकृतिक माध्यम बनाती है वह मृदा कहलाती है। मृदा में विभिन्न प्रकार के रासायनिक और भौतिक तत्व पाये जाते हैं। खनिज 45%, कार्बनिक पदार्थ 5%, तथा जल 20–30% मृदा में पाया जाता है, जिससे उसमें पकड़ बनी रहती है, किन्तु मानव के बढ़ते प्रदूषण से मृदा में क्षरण एवं बंजर की स्थिति बनती जाती है तथा जल धारण की क्षमता घटती जाती है। इस प्रकार मृदा में मल मूत्र में पाये जाने वाला वायरस बैक्टीरिया से मानव स्वास्थ्य प्रभावित होता है। (5)

भारत सरकार के पर्यावरण स्वास्थ्य विभाग द्वारा किये जा रहे विशेष कार्य
महत्वपूर्ण पर्यावरण सम्बन्धी दिवस (6)

क्र.	दिवस	दिनांक
1	विश्व कुष्ठ निवारण दिवस	30 जनवरी
2	विश्व दिव्यांग दिवस	15 मार्च
3	विश्व वन्य दिवस	21 मार्च
4	विश्व जल दिवस	22 मार्च
5	विश्व वायु मण्डलीय दिवस	23 मार्च
6	विश्व क्षय दिवस	24 मार्च
7	विश्व स्वास्थ्य दिवस	7 अप्रैल
8	विश्व पृथ्वी दिवस	22 अप्रैल
9	विश्व रेड क्रास दिवस	8 मई
10	धूम्रपान व तम्बाकू रहित दिवस	31 मई
11	विश्व पर्यावरण दिवस	5 जून
12	विश्व ओजोन दिवस	16 सितम्बर
13	कैन्सर रोगी कल्याण दिवस	22 सितम्बर
14	विश्व प्राकृतिक विनाश को कम करने के लिए संयुक्त राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय दिवस	13 अक्टूबर

उपरोक्त कार्यक्रम मानव स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता के लिये चलाये जा रहे हैं।

घरेलू पर्यावरण और प्रदूषण :– दूसरी ओर घर के भीतर का पर्यावरण भी मनुष्य के स्वास्थ्य को काफी गहराई से प्रभावित करता है। घरों में प्रयोग की जाने वाली बहुत–सी चीजें घरेलू पर्यावरण को प्रभावित करती हैं। हालांकि यह आवश्यक नहीं कि इस सूची में दिए गए सारे पदार्थों का हमारे स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़े, लेकिन यह तो तय है, कि इसमें से ज्यादातर हमारे शरीर पर विपरीत प्रभाव ही डालते हैं। रोचक बात तो ये हैं, कि घरों में इस्तेमाल की जाने वाली रोजमर्रा की चीजों का दुष्प्रभाव हमारे शरीर पर अनजाने में ही पड़ता रहता है और कई बार हमें उन दुष्प्रभावों का अहसास भी नहीं होता। इस सूची में दिए गए पदार्थों का प्रयोग प्रत्येक घर में होता है। ऐसे में मान लीजिए कि घर में डिटरजेंट से सफाई की गई तो उस डिटरजेंट की महक पूरे घर में फैल जाती है, और हमारी नाक द्वारा हमारे शरीर में भी प्रवेश कर जाती है जो शरीर में घातक परिणाम छोड़ जाती है। सामान्यतः इन पदार्थों के संपर्क में आने पर मनुष्य अपनी इंद्रियों द्वारा इन पदार्थों के हानिकारक रासायनिक तत्वों को आत्मसात कर लेता है, और इस तरह से शरीर में रोग के कीटाणुओं का प्रवेश होता है। यह जरूरी नहीं कि इन रोगाणुओं के कारण मानव शरीर किसी गंभीर रोग

से ग्रस्त हो जाए, लेकिन कम से कम सामान्य चिड़चिड़ापन तो होता ही है।

निष्कर्ष :– मानव का स्वास्थ्य निःसंदेह उसकी बड़ी पूंजी है, क्योंकि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ विचारों का वास होता है। स्वस्थ विचारों में रचनात्मकता, तीव्रता और तत्परता होती है साथ ही कुछ कर गुजरने की इच्छा ही नहीं क्षमता भी होती है। स्वस्थ शरीर में ही खुशहाल मन रहता है। एक संतुष्ट और खुशहाल मन में ही यह सामर्थ्य होती है कि वह मानवमात्र के लिये सद्भावना रख सके। ऐसे हालातों में कहा जाता है कि– मनुष्य का अच्छा स्वास्थ्य न केवल उसके अपने लिये बल्कि उसके परिवार, देश और समाज के लिये अहमियत रखता है। इसलिये मनुष्य के स्वास्थ्य पर पर्यावरण का कुप्रभाव निश्चय चिंता का विषय है।

पर्यावरण में वायु प्रदूषित होने से मनुष्य श्वसनीय, शोध, अस्थमा, निमोनिया, फेफड़े में विसंगतियां, गले में जलन, दर्द, आंखों में जलन आदि रोगों से पीड़ित है। पर्यावरण में कार्बनडाई आक्साइड एवं ऊष्मा/तापमान में वृद्धि होने लगी, ओजोन की कमी के कारण सौर मण्डल से पराबैगनी किरणें पृथ्वी पर आकर मनुष्य की त्वचा को प्रभावित करती हैं। पर्यावरण में कभी–कभी धूल, कोहरा छा जाता है इससे CO_2 की मात्रा अधिक होने के कारण मानवशरीर व स्वास्थ्य प्रभावित होता है। मानव रक्तदाब, मानसिक तनाव, तंत्रिकीय विसंगतियां, हृदय अवरोध, रक्तव्याधियां, कैंसर आदि रोगों से पीड़ित होता है।

मनुष्य की उत्पत्ति के पश्चात एक लंबी अवधि तक मनुष्य प्राकृतिक स्वच्छ स्वस्थ पर्यावरण में जीवन व्यतीत करता था लेकिन पर्यावरण प्रदूषण के कारण मनुष्य का स्वास्थ्य प्रभावित हुआ। मानव समाज ने पहले ध्यान नहीं दिया, लेकिन जब प्रदूषण के कारण अनेक घटनाएं होने लगी तब मानव का ध्यान पर्यावरण संरक्षण पर आया। मनुष्य के स्वस्थ जीवन के लिये पर्यावरण की स्वच्छता संतुलन एवं संरक्षण अधिक आवश्यक है। मानव पर्यावरण को स्वच्छ रखकर आने वाली पीढ़ी को जीवित रखने का वातावरण दे सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 मिनिस्ट्री ऑफ लॉ एण्ड जस्टिस (लेजिस्लेटिव डिपार्टमेंट) नई दिल्ली।
- पार्क सी.सी. (1980) पारिस्थितिकी और पर्यावरण प्रबंधन, बटरबर्थस लंदन।
- केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड 1996 रिपोर्ट ऑन वाटर क्वालिटी मॉनिटरिंग ऑफ दा यमुना।
- सेंटर फॉर साईंस एण्ड इन्वायमेन्ट।
- श्रीवास्तव ए.के. (2012) पर्यावरण विशेषज्ञ।
- यादव, कुशल पाल (2013) सीएसई में इन्वायरमेन्ट प्रोग्राम के कोऑर्डिनेटर।
- मनोरमा इयर बुक 2001 से साभार – पर्यावरणीय सुरक्षा एवं सुधार पृष्ठ 293
- तिवारी के.एल. जाधव, एस.के. 2009 पर्यावरण विज्ञान आई.के. इंटरनेशनल प्राइवेट लिमिटेड नई दिल्ली।
- बराह पुराण 172/39
- मनुस्मृति 4/56
- डॉ. नरेन्द्र मल सुराणा/पर्यावरण अध्ययन पृष्ठ 10
- ऋग्वेद– 7–49
- पर्यावरण शिक्षा – डॉ. एम. के. गोयल पृष्ठ – 268 –272

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

पर्यावरण एवं जीवन पर प्रभाव

डॉ. सुनीता चौहान
प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, संत बिरागी बाबा कॉलेज, कानपुर

सार :– पर्यावरण शब्द का निर्माण दो शब्दों से मिल कर हुआ है। ''परि'' जो हमारे चारों और है "आवरण" जो हमें चारों और से घेरे हुए है। पर्यावरण उन सभी भौतिक, रासायनिक एवं जैविक कारकों की समष्टिगत इकाई है जो किसी जीवधारी अथवा पारितंत्रीय आबादी को प्रभावित करते हैं तथा उनके रूप, जीवन और जीविता को तय करते हैं।

सामान्य अर्थों में यह हमारे जीवन को प्रभावित करने वाले सभी जैविक और अजैविक तत्वों, तथ्यों, प्रक्रियाओं और घटनाओं के समुच्चय से निर्मित इकाई है। यह हमारे चारों ओर व्याप्त है और हमारे जीवन की प्रत्येक घटना इसी के अन्दर सम्पादित होती है तथा हम मनुष्य अपनी समस्त क्रियाओं से इस पर्यावरण को भी प्रभावित करते हैं। इस प्रकार एक जीवधारी और उसके पर्यावरण के बीच अन्योन्याश्रय संबंध भी होता है।

प्रस्तावना :– पर्यावरण के जैविक संघटकों में सूक्ष्म जीवाणु से लेकर कीड़े–मकोड़े, सभी जीव–जंतु और पेड़–पौधे आ जाते हैं और इसके साथ ही उनसे जुड़ी सारी जैव क्रियाएँ और प्रक्रियाएँ भी। अजैविक संघटकों में जीवनरहित तत्व और उनसे जुड़ी प्रक्रियाएँ आती हैं, जैसेः चट्टानें, पर्वत, नदी, हवा और जलवायु के तत्व इत्यादि।

सामान्यतः पर्यावरण को मनुष्य के संदर्भ में परिभाषित किया जाता है और मनुष्य को एक अलग इकाई और उसके चारों ओर व्याप्त अन्य समस्त चीजों को उसका पर्यावरण घोषित कर दिया जाता है। किन्तु यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि अभी भी इस धरती पर बहुत सी मानव सभ्यताएँ हैं, जो अपने को पर्यावरण से अलग नहीं मानतीं और उनकी नज़र में समस्त प्रकृति एक ही इकाई है। जिसका मनुष्य भी एक हिस्सा है। वस्तुतः मनुष्य को पर्यावरण से अलग मानने वाले वे हैं जो तकनीकी रूप से विकसित हैं और विज्ञान और तकनीक के व्यापक प्रयोग से अपनी प्राकृतिक दशाओं में काफ़ी बदलाव लाने में समर्थ हैं। मानव हस्तक्षेप के आधार पर पर्यावरण को दो प्रखण्डों में विभाजित किया जाता है – (1) प्राकृतिक या नैसर्गिक पर्यावरण और मानव निर्मित पर्यावरण। (2) हालाँकि पूर्ण रूप से प्राकृतिक पर्यावरण (जिसमें मानव हस्तक्षेप बिल्कुल न हुआ हो) या पूर्ण रूपेण मानव निर्मित पर्यावरण (जिसमें सब कुछ मनुष्य निर्मित हो), कहीं नहीं पाए जाते। यह विभाजन प्राकृतिक प्रक्रियाओं और दशाओं में मानव हस्तक्षेप की मात्रा की अधिकता और न्यूनता का द्योतक मात्र है। पारिस्थितिकी और पर्यावरण भूगोल में प्राकृतिक पर्यावरण शब्द का प्रयोग पर्यावास (Habitat) के लिये भी होता है। तकनीकी मानव द्वारा आर्थिक उद्देश्य और जीवन में विलासिता के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु प्रकृति के साथ व्यापक छेड़छाड़ के क्रियाकलापों ने प्राकृतिक पर्यावरण का संतुलन नष्ट किया है, जिससे प्राकृतिक व्यवस्था या प्रणाली के अस्तित्व पर ही संकट उत्पन्न हो गया है। इस तरह की समस्याएँ पर्यावरणीय अवनयन कहलाती हैं।

पर्यावरणीय समस्याएँ जैसे प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन इत्यादि मनुष्य को अपनी जीवनशैली के बारे में पुनर्विचार के लिये प्रेरित कर रही हैं और अब पर्यावरण संरक्षण और पर्यावरण प्रबंधन की चर्चा है। मनुष्य वैज्ञानिक और तकनीकी रूप से अपने द्वारा किये गये परिवर्तनों से नुकसान को कितना कम करने में सक्षम है, आर्थिक और राजनैतिक हितों की टकराव में पर्यावरण पर कितना ध्यान दिया जा रहा है और मनुष्यता अपने पर्यावरण के प्रति कितनी जागरूक है, यह आज के ज्वलंत प्रश्न हैं।

नामोत्पत्ति :– पर्यावरण शब्द संस्कृत भाषा के 'परि' उपसर्ग (चारों ओर) और 'आवरण' से मिलकर बना है जिसका अर्थ है ऐसी चीजों का समुच्चय जो किसी व्यक्ति या जीवधारी को चारों ओर से आवृत्त किये हुए हैं। पारिस्थितिकी और भूगोल में यह शब्द अंग्रेजी के Environment के पर्याय के रूप में इस्तेमाल होता है।

अंग्रेजी शब्द Environment स्वयं उपरोक्त पारिस्थितिकी के अर्थ में काफ़ी बाद में प्रयुक्त हुआ और यह शुरूआती दौर में आसपास की सामान्य दशाओं के लिये प्रयुक्त होता था। यह फ्रांसीसी भाषा से उद्भूत है (6) जहाँ यह "state of being environed" (see environ + – ment) के अर्थ में प्रयुक्त होता था और इसका पहला ज्ञात प्रयोग कार्लाइल द्वारा जर्मन शब्द Umgebung के अर्थ को फ्रांसीसी में व्यक्त करने के

लिये हुआ।

पर्यावरण का ज्ञान :– आज पर्यावरण एक जरूरी सवाल ही नहीं बल्कि ज्वलंत मुद्दा बना हुआ है लेकिन आज लोगों में इसे लेकर कोई जागरूकता नहीं है। ग्रामीण समाज को छोड़ दें तो भी महानगरीय जीवन में इसके प्रति खास उत्सुकता नहीं पाई जाती। परिणामस्वरूप पर्यावरण सुरक्षा महज एक सरकारी एजेण्डा ही बन कर रह गया है। जबकि यह पूरे समाज से बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध रखने वाला सवाल है। जब तक इसके प्रति लोगों में एक स्वाभाविक लगाव पैदा नहीं होता, पर्यावरण संरक्षण एक दूर का सपना ही बना रहेगा।

पर्यावरण का सीधा सम्बन्ध प्रकृति से है। अपने परिवेश में हम तरह–तरह के जीव–जन्तु, पेड़–पौधे तथा अन्य सजीव–निर्जीव वस्तुएँ पाते हैं। ये सब मिलकर पर्यावरण की रचना करते हैं। विज्ञान की विभिन्न शाखाओं जैसे–भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान तथा जीव विज्ञान, आदि में विषय के मौलिक सिद्धान्तों तथा उनसे सम्बन्ध प्रायोगिक विषयों का अध्ययन किया जाता है। परन्तु आज की आवश्यकता यह है कि पर्यावरण के विस्तृत अध्ययन के साथ–साथ इससे सम्बन्धित व्यावहारिक ज्ञान पर बल दिया जाए। आधुनिक समाज को पर्यावरण से सम्बन्धित समस्याओं की शिक्षा व्यापक स्तर पर दी जानी चाहिए। साथ ही इससे निपटने के बचावकारी उपायों की जानकारी भी आवश्यक है। आज के मशीनी युग में हम ऐसी स्थिति से गुजर रहे हैं। प्रदूषण एक अभिशाप के रूप में सम्पूर्ण पर्यावरण को नष्ट करने के लिए हमारे सामने खड़ा है। सम्पूर्ण विश्व एक गम्भीर चुनौती के दौर से गुजर रहा है। यद्यपि हमारे पास पर्यावरण सम्बन्धी पाठ्य–सामग्री की कमी है तथापि सन्दर्भ सामग्री की कमी नहीं है। वास्तव में आज पर्यावरण से सम्बद्ध उपलब्ध ज्ञान को व्यावहारिक बनाने की आवश्यकता है ताकि समस्या को जनमानस सहज रूप से समझ सके। ऐसी विषम परिस्थिति में समाज को उसके कर्त्तव्य तथा दायित्व का एहसास होना आवश्यक है। इस प्रकार समाज में पर्यावरण के प्रति जागरूकता पैदा की जा सकती है। वास्तव में सजीव तथा निर्जीव दो संघटक मिलकर प्रकृति का निर्माण करते हैं। वायु, जल तथा भूमि निर्जीव घटकों में आते हैं जबकि जन्तु–जगत तथा पादप–जगत से मिलकर सजीवों का निर्माण होता है। इन संघटकों के मध्य एक महत्वपूर्ण रिश्ता यह है कि अपने जीवन–निर्वाह के लिए परस्पर निर्भर रहते हैं। जीव–जगत में यद्यपि मानव सबसे अधिक सचेतन एवं संवेदनशील प्राणी है तथापि अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु वह अन्य जीव–जन्तुओं, पादप, वायु, जल तथा भूमि पर निर्भर रहता है। मानव के परिवेश में पाए जाने वाले जीव–जन्तु पादप, वायु, जल तथा भूमि पर्यावरण की संरचना करते है।

शिक्षा के माध्यम से पर्यावरण का ज्ञान शिक्षा मानव–जीवन के बहुमुखी विकास का एक प्रबल साधन है। इसका मुख्य उद्देश्य व्यक्ति के अन्दर शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संस्कृतिक तथा आध्यात्मिक बुद्धी एवं परिपक्वता लाना है। शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्राकृतिक वातावरण का ज्ञान अति आवश्यक है। प्राकृतिक वातावरण के बारे में ज्ञानार्जन की परम्परा भारतीय संस्कृति में आरम्भ से ही रही है। परन्तु आज के भौतिकवादी युग में परिस्थितियाँ भिन्न होती जा रही हैं। एक ओर जहां विज्ञान एवं तकनीकी के विभिन्न क्षेत्रों में नए–नए अविष्कार हो रहे हैं। तो दूसरी ओर मानव परिवेश भी उसी गति से प्रभावित हो रहा है। आने वाली पीढ़ी को पर्यावरण में हो रहे परिवर्तनों का ज्ञान शिक्षा के माध्यम से होना आवश्यक है। पर्यावरण तथा शिक्षा के अन्तर्सम्बन्धों का ज्ञान हासिल करके कोई भी व्यक्ति इस दिशा में अनेक महत्वपूर्ण कार्य कर सकता है। पर्यावरण का विज्ञान से गहरा सम्बन्ध है, किन्तु उसकी शिक्षा में किसी प्रकार की वैज्ञानिक पेचीदगियाँ नहीं हैं। शिक्षार्थियों को प्रकृति तथा पारिस्थितिक ज्ञान सीधी तथा सरल भाषा में समझायी जानी चाहिए। शुरू–शुरू में यह ज्ञान सतही तौर पर मात्र परिचयात्मक ढंग से होना चाहिए। आगे चलकर इसके तकनीकी पहलुओं पर विचार किया जाना चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में पर्यावरण का ज्ञान मानवीय सुरक्षा के लिए आवश्यक है।

पर्यावरण अपनी सम्पूर्णता में एक इकाई है जिसमें अजैविक और जैविक संघटक आपस में विभिन्न अन्तर्क्रियाओं द्वारा संबद्ध और अंतर्गुम्फित होते हैं। इसकी यह विशेषता इसे एक पारितंत्र का रूप प्रदान करती है क्योंकि पारिस्थितिक तंत्र या पारितंत्र पृथ्वी के किसी क्षेत्र में समस्त जैविक और अजैविक तत्वों के अंतर्सम्बंधित समुच्चय को कहते हैं। अतः पर्यावरण भी एक पारितंत्र है।

पृथ्वी पर पैमाने (Scale) के हिसाब से सबसे वृहत्तम पारितंत्र जैवमंडल को माना जाता है। जैवमंडल पृथ्वी का वह भाग है जिसमें जीवधारी पाए जाते हैं और यह स्थलमंडल, जलमण्डल तथा वायुमण्डल में व्याप्त है। पूरे पार्थिव पर्यावरण की रचना भी इन्हीं इकाइयों से

हुई है, अतः इन अर्थों में वैश्विक पर्यावरण, जैवमण्डल और पार्थिव पारितंत्र एक दूसरे के समानार्थी हो जाते हैं।

माना जाता है कि पृथ्वी के वायुमण्डल का वर्तमान संघटन और इसमें ऑक्सीजन की वर्तमान मात्रा पृथ्वी पर जीवन होने का कारण ही नहीं अपितु परिणाम भी है। प्रकाश–संश्लेषण, जो एक जैविक (या पारिस्थितिकीय अथवा जैवमण्डलीय) प्रक्रिया है, पृथ्वी के वायुमण्डल के गठन को प्रभावित करने वाली महत्वपूर्ण प्रक्रिया रही है। इस प्रकार के चिंतन से जुड़ी विचारधारा पूरी पृथ्वी को एक इकाई या सजीव पृथ्वी (living earth) के रूप में देखती है।

इसी प्रकार मनुष्य के ऊपर पर्यवारण के प्रभाव और मनुष्य द्वारा पर्यावरण पर डाले गये प्रभावों का अध्ययन मानव पारिस्थितिकी और मानव भूगोल का प्रमुख अध्ययन बिंदु है।

पर्यावरण समस्यायें :– ज्यादातर पर्यावरणीय समस्याएँ पर्यावरणीय अवनयन और मानव जनसंख्या और मानव द्वारा संसाधनों के उपभोग में वृद्धि से जुड़ी हैं। पर्यावरणीय अवनयन के अंतर्गत पर्यावरण में होने वाले वे सारे परिवर्तन आते हैं जो अवांछनीय हैं और किसी क्षेत्र विशेष में या पूरी पृथ्वी पर जीवन और संधारणीयता को खतरा उत्पन्न करते हैं। अतः इसके अंतर्गत प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता का क्षरण और अन्य प्राकृतिक आपदाएं इत्यादि शामिल की जाती हैं। पर्यावरणीय अवनयन के साथ मिलकर जनसंख्या में चरघातांकी दर से हो रही वृद्धि तथा मानव द्वारा उपभोग के बदलते प्रतिरूप लगभग सारी पर्यावरणीय समस्याओं के मूल कारण हैं। संसाधन न्यूनीकरण का अर्थ है प्राकृतिक संसाधनों का मनुष्य द्वारा अपने आर्थिक लाभ हेतु इतनी तेजी से दोहन कि उनका प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा पुनर्भरण (Replenishment) न हो पाए। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संसाधन क्षरण के लिये जनसंख्या के दबाव, तेज वृद्धि दर और लोगों के उपभोग प्रतिरूप का भी प्रभाव जिम्मेवार माना जा रहा है।

संसाधनों को दो वर्गों में विभक्त किया जाता है – नवीकरणीय संसाधन और अनवीकरणीय संसाधन। इसके आलावा कुछ संसाधन इतनी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं कि उनका क्षय नहीं हो सकता उन्हें अक्षय संसाधन कहते हैं जैसे सौर ऊर्जा।

अनवीकरणीय संसाधनों का तेजी से दोहन उनके भण्डार को समाप्त कर मानव जीवन के लिये कठिन परिस्थितियां पैदा कर सकता है। कोयला, पेट्रोलियम, या धात्विक खनिजों के भण्डारों का निर्माण एक दीर्घ अवधि की घटना है और जिस तेजी से मनुष्य इन का दोहन कर रहा है ये एक न एक दिन समाप्त हो जायेंगे। वहीं दूसरी ओर कुछ नवीकरणीय संसाधन भी मनुष्य द्वारा इतनी तेजी से प्रयोग में लाये जा रहे हैं कि उनका प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा पुनर्भरण उतनी तेजी से संभव नहीं और इस प्रकार वे भी अनवीकरणीय संसाधन की श्रेणी में आ जायेंगे।

प्रदूषण क्या है :– प्रदूषण अथवा पर्यावरणीय प्रदूषण पर्यावरण में किसी पदार्थ (ठोस, द्रव या गैस) अथवा ऊर्जा (ऊष्मा, ध्वनि, रेडियोधर्मिता इत्यादि) के प्रवेश को कहते हैं यदि इसकी गति इतनी तेज हो कि सामान्य और प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा इसका परिक्षेपण, मंदन, वियोजन, पुनर्चक्रण अथवा अहानिकारक रूप में संरक्षण न हो सके। इस प्रकार प्रदूषण के दो स्पष्ट सूचक हैं, किसी पदार्थ या ऊर्जा का पर्यावरण में प्रवेश और उसका प्राकृतिक पर्यावरण के प्रति हानिकारक या अवांछित होना। इस तरह के अवांछित तत्व को प्रदूषक या दूषक कहते हैं।

प्रदूषण का वर्गीकरण प्रदूषक के प्रकार, स्रोत अथवा परितंत्र के जिस हिस्से में उसका प्रवेश होता है, इसके आधार पर किया जाता है। उदाहरण के तौर पर वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, इत्यादि प्रकार इस आधार पर निश्चित किये जाते हैं कि पारितंत्र के इस हिस्से में दूषक तत्व का प्रवेश होता है। वहीं दूसरी ओर रेडियोधर्मी प्रदूषण, प्रकाश प्रदूषण, ध्वनि या रव प्रदूषण इत्यादि प्रकार प्रदूषक के खुद के प्रकार पर आधारित वर्गीकरण हैं।

जलवायु परिवर्तन :– हमारे जीवन मे हमने बहुत सारे परिवर्तन देखे है जल वायु परिवर्तन उन्ही मे से एक है जल वायु परिवर्तन के कारण ही पृथ्वी पर मौसम परिवर्तन होता है मौसम से हमे बहुत लाभ हो ता है मोसम के बिना कोई फसल नही उगाई जा सकती एवं ना ही मनुष्य जीवन एक मौसम मे गुजार सकता है समस्त जीव धारी को मौसम की जरूरत होती है जलवायु परिवर्तन से हमे लाभ भी है तो नुकसान भी क्योंकि पर्यावरण प्रबंधन का तात्पर्य पर्यावरण के प्रबंधन से नहीं है, बल्कि आधुनिक मानव समाज के पर्यावरण के साथ संपर्क तथा उस पर पड़ने वाले प्रभाव के प्रबंधन से है। प्रबंधकों को प्रभावित करने वाले तीन प्रमुख मुद्दे हैं राजनीति (नेटवर्किंग), कार्यक्रम

(परियोजनायें) और संसाधन (धन, सुविधाएँ, आदि)। पर्यावरण प्रबंधन की आवश्यकता को कई दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है।

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिंतन :– भारतीय संस्कृति में पर्यावरण को विशेष महत्त्व दिया गया है। प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के अनेक घटकों जैसे वृक्षों को पूज्य मानकर उन्हें पूजा जाता है। पीपल के वृक्ष को पवित्र माना जाता है। वट के वृक्ष की भी पूजा होती है। जल, वायु, अग्नि को भी देव मानकर उनकी पूजा की जाती है। समुद्र, नदी को भी पूजन करने योग्य माना गया है। गंगा, सिंधु, सरस्वती, यमुना, गोदावरी, नर्मदा जैसी नदीयों को पवित्र मानकर पूजा की जाती है। धरती को भी माता का दर्जा दिया गया है। प्राचीन काल से ही भारत में पर्यावरण के विविध स्वरुपों की पूजा होती है।

पर्यावरण विज्ञान :– पर्यावरणीय विधि अथवा पर्यावरण विधि समेकित रूप से उन सभी अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय अथवा क्षेत्रीय सन्धियों, समझौतों और संवैधानिक विधियों को कहा जाता है जो प्राकृतिक पर्यावरण पर मानव प्रभाव को कम करने और पर्यावरण की संधारणीयता बनाये रखने हेतु हैं। भारत में पर्यावरण क़ानून पर्यावरण (रक्षा) अधिनियम 1986 से नियमित होता है जो एक व्यापक विधान है। इसकी रूप रेखा केन्द्रीय सरकार के विभिन्न केन्द्रीय और राज्य प्राधिकरणों के क्रियाकलापों के समन्वयन के लिए तैयार किया गया है जिनकी स्थापना पिछले कानूनों के तहत की गई है जैसा कि जल अधिनियम और वायु अधिनियम। अन्य विधियों में भारतीय वन अधिनियम, 1927 और वन्यजीव संरक्षण अधिनियम, 1972 प्रमुख हैं। एक राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण का भी गठन किया गया है।

पर्यावरण संरक्षण के उपाय :– पर्यावरण प्रदूषण के कुछ दूरगामी दुष्प्रभाव हैं, जो अतीव घातक हैं, जैसे आणविक विस्फोटों से रेडियोधर्मिता का आनुवांशिक प्रभाव, वायुमण्डल का तापमान बढ़ना, ओजोन परत की हानि, भूक्षरण आदि ऐसे घातक दुष्प्रभाव हैं। प्रत्यक्ष दुष्प्रभाव के रूप में जल, वायु तथा परिवेश का दूषित होना एवं वनस्पतियों का विनष्ट होना, मानव का अनेक नये रोगों से आक्रान्त होना आदि देखे जा रहे हैं। बड़े कारखानों से विषैला अपशिष्ट बाहर निकलने से तथा प्लास्टिक आदि के कचरे से प्रदूषण की मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ रही है।

अपने पर्यावरण को बेहतर बनाने के लिए हमें सबसे पहले अपनी मुख्य जरूरत 'जल' को प्रदूषण से बचाना होगा। कारखानों का गंदा पानी, घरेलू, गंदा पानी, नालियों में प्रवाहित मल, सीवर लाइन का गंदा निष्कासित पानी समीपस्थ नदियों और समुद्र में गिरने से रोकना होगा। कारखानों के पानी में हानिकारक रासायनिक तत्व घुले रहते हैं जो नदियों के जल को विषाक्त कर देते हैं, परिणामस्वरूप जलचरों के जीवन को संकट का सामना करना पड़ता है। दूसरी ओर हम देखते हैं कि उसी प्रदूषित पानी को सिंचाई के काम में लेते हैं जिसमें उपजाऊ भूमि भी विषैली हो जाती है। उसमें उगने वाली फसल व सब्जियां भी पौष्टिक तत्वों से रहित हो जाती हैं जिनके सेवन से अवशिष्ट जीवननाशी रसायन मानव शरीर में पहुंच कर खून को विषैला बना देते हैं। कहने का तात्पर्य यही है कि यदि हम अपने कल को स्वस्थ देखना चाहते हैं तो आवश्यक है कि बच्चों को पर्यावरण सुरक्षा का समुचित ज्ञान समय–समय पर देते रहें। अच्छे व मंहगें ब्रांड के कपड़े पहनाने से कहीं महत्वपूर्ण है उनका स्वास्थ्य, जो हमारा भविष्य व उनकी पूंजी है।

आज वायु प्रदूषण ने भी हमारे पर्यावरण को बहुत हानि पहुंचाई है। जल प्रदूषण के साथ ही वायु प्रदूषण भी मानव के सम्मुख एक चुनौती है। माना कि आज मानव विकास के मार्ग पर अग्रसर है परंतु वहीं बड़े–बड़े कल–कारखानों की चिमनियों से लगातार उठने वाला धुआं, रेल व नाना प्रकार के डीजल व पेट्रोल से चलने वाले वाहनों के पाइपों से और इंजनों से निकलने वाली गैसें तथा धुआं, जलाने वाला हाइकोक, ए.सी., इन्वर्टर, जनरेटर आदि से कार्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन, सल्फ्यूरिक एसिड, नाइट्रिक एसिड प्रति क्षण वायुमंडल में घुलते रहते हैं। वस्तुतः वायु प्रदूषण सर्वव्यापक हो चुका है। सही मायनों में पर्यावरण पर हमारा भविष्य आधारित है, जिसकी बेहतरी के लिए ध्वनि प्रदूषण को और भी ध्यान देना होगा। अब हाल यह है कि महानगरों में ही नहीं बल्कि गाँवों तक में लोग ध्वनि विस्तारकों का प्रयोग करने लगे हैं। बच्चे के जन्म की खुशी, शादी–पार्टी सभी में डी.जे. एक आवश्यकता समझी जाने लगी है। जहां गाँवों को विकसित करके नगरों से जोड़ा गया है। वहीं मोटर साइकिल व वाहनों की चिल्ल–पों महानगरों के शोर को भी मुँह चिढ़ाती नजर आती है। औद्योगिक संस्थानों की मशीनों के कोलाहल ने ध्वनि प्रदूषण को जन्म दिया है। इससे मानव की श्रवण–शक्ति का ह्रास होता है। ध्वनि प्रदूषण का मस्तिष्क पर भी घातक प्रभाव पड़ता है। जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण और ध्वनि तीनों ही हमारे व

हमारे फूल जैसे बच्चों के स्वास्थ्य को चौपट कर रहे हैं। ऋतुचक्र का परिवर्तन, कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा का बढ़ता हिमखंड को पिघला रहा है। सुनामी, बाढ़, सूखा, अतिवृष्टि या अनावृष्टि जैसे दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं, जिन्हें देखते हुए अपने बेहतर कल के लिए '5 जून' को समस्त विश्व में 'पर्यावरण दिवस' के रूप में मनाया जा रहा है। 'पौधा लगाने से पहले वह जगह तैयार करना आवश्यक है जहां वह विकसित व बड़ा होगा।

निष्कर्ष :– उपर्युक्त सभी प्रकार के प्रदूषण से बचने के लिए यदि थोड़ा सा भी उचित दिशा में प्रयास करें तो बचा सकते हैं अपना पर्यावरण। सर्वप्रथम हमें जनाधिक्य को नियंत्रित करना होगा। दूसरे जंगलों व पहाड़ों की सुरक्षा पर ध्यान दिया जाए। देखने में जाता है कि पहाड़ों पर रहने वाले लोग कई बार घरेलू ईंधन के लिए जंगलों से लकड़ी काटकर इस्तेमाल करते हैं जिससे पूरे के पूरे जंगल स्वाहा हो जाते हैं। कहने का तात्पर्य है जो छोटे–छोटे व बहुत कम आबादी वाले गांव हैं उन्हें पहाड़ों पर सड़क, बिजली–पानी जैसे सुविधाएं मुहैया कराने से बेहतर है उन्हें प्लेन में विस्थापित करें। इससे पहाड़ व जंगल कटान कम होगा, साथ ही पर्यावरण भी सुरक्षित रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- Department of Environment Government of Rajasthan Publication Jaipur (India)
- Desai Bharat ed Environment Lower of India Lancer lance Book P.O. Box 4236 New Delhi (India) 1994, PP 488
- Woodbury Angus M. Principal of General Books New York, the blikistan Company India 1954 PP 503.
- Vinal O.P. and P. D. Jyagi Energy Form Biomass New york W.W Norton and Company 1974, PP 528.

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

मानव एवं पर्यावरण प्रदूषण

डॉ. चंचला कुमार
समाजशास्त्र विभाग, एस. डी. कॉलेज, परैया (गया)

प्राचीन काल में प्रकृति और मानव के बीच भावनात्मक संबंध था। मानव अत्यंत कृतज्ञ भाव से प्रकृति के उपहारों को ग्रहण करता था। प्रकृति के किसी भी अवयव को क्षति पहुँचाना पाप समझा जाता था। बढ़ती जनसंख्या एवं भौतिक विकास के फलस्वरूप प्रकृति का असीमित दोहन प्रारम्भ हुआ। भूमि से हमने अपार खनिज सम्पदा, डीजल, पेट्रोल आदि निकाल कर धरती की कोख को उजाड़ दिया। वृक्षों को काट–काट कर मानव समाज ने धरती को नग्न कर दिया। वन्य जीवों के प्राकृतवास वनों के कटने के कारण वन्य–जीव बेघर होते गए। असीमित औद्योगीकरण के कारण लगातार जहर उगलती चिमनियों ने वायुमण्डल को विषाक्त एवं निष्प्राण बना दिया। हमारी पावन नदियाँ अब गंदे नाले का रूप ले चुकी हैं। नदियों का जल विशाक्त होने के कारण उसमें रहने वाली मछलियाँ एवं अन्य जलीय जीव तड़प–तड़प कर मर रहे हैं। बढ़ते ध्वनि प्रदूषण से कानों के परदों पर लगातार घातक प्रभाव पड़ रहा है। लगातार घातक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग भूमि को उसरीला बनाता जा रहा है। पृथ्वी पर अम्लीय वर्षा का प्रकोप धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा है तथा लगातार तापक्रम बढ़ने से पहाड़ों की बर्फ पिघल रही है जिससे पृथ्वी का अस्तित्व संकटग्रस्त होता जा रहा है।

पर्यावरण प्रदूषण आज विभिन्न घातक स्वरूपों में विद्यमान है जो मानव सभ्यता के अस्तित्व को चुनौती दे रहा है। स्थिति यहाँ तक आ गई है कि सृष्टि का भविष्य संकटग्रस्त है। पर्यावरण प्रदूषण के प्रमुख स्वरूप निम्न प्रकार हैं–

1. **वायु प्रदूषण** :– मानव को प्रकृति प्रदत्त एक निःशुल्क उपहार मिला है और वह है– वायु। यह उपहार सभी जीवों का आधार है। मानव बिना भोजन एवं बिना जल के कुछ समय भले ही व्यतीत कर ले, बिना वायु के वह दस मिनट भी जीवित नहीं रह सकता। यह अत्यंत चिन्ता का विषय है कि प्रकृति प्रदत्त जीवनदायिनी वायु लगातार जहरीली होती जा रही है। शहरों का असीमित विस्तार, बढ़ता औद्योगीकरण, परिवहन के साधनों में लगातार वृद्धि तथा विलासिता की वस्तुएं (जैसे– एयरकन्डीशनर, रेफ्रिजरेटर आदि) वायु प्रदूषण को लगातार बढ़ावा दे रही हैं।

मानव 24 घण्टे में लगभग 22,000 बार साँस लेता है तथा इसमें प्रयुक्त वायु की मात्रा लगभग 35 गैलन या 16 किग्रा है। ऐसी वायु जो हानिकारक अवयवों से मुक्त हो, उसे शुद्ध वायु कहते हैं। वायु के मुख्य संघटकों में नाइट्रोजन, ऑक्सीजन एवं कार्बन डाइ ऑक्साइड हैं। उक्त के अतिरिक्त वायुमण्डल में थोड़ी मात्रा में आर्गन या नियॉन जैसी विरल गैसें भी पाई जाती हैं। वायुमण्डल में प्रमुख गैसों की सान्द्रता निम्न प्रकार है–

1	नाइट्रोजन	79.20 प्रतिशत
2	ऑक्सीजन	20.60 प्रतिशत
3	कार्बन डाइ ऑक्साइड	0.20 प्रतिशत
4	अन्य	अति सूक्ष्म रूप में

आधुनिक युग में उद्योगों की चिमनियों, बढ़ते वाहनों एवं अन्य कारणों से वायुमण्डल में अनेक हानिकारक गैसें मिश्रित हो रही हैं जिनमें सल्फर डाइ ऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड, नाइट्रोजन के विभिन्न ऑक्साइड, क्लोरो फ्लोरो कार्बन एवं फार्मेलिडहाइड मुख्य हैं। इसके अतिरिक्त सड़कों पर चल रहे वाहनों से निकला सीसा (लेड), अधजले हाइड्रोकार्बन और विषैला धुआँ भी वायुमण्डल को लगातार प्रदूषित कर रहे हैं। वायुमण्डलीय वातावरण के इस असंतुलन को 'वायु प्रदूषण' कहते हैं।

अत्यधिक वायु प्रदूषण के कारण आसमान अब भूरा दिखाई देता है। विषाक्त वायु को अवशोषित करने वाले वृक्षों के कटान से वायुमण्डल में प्राणवायु ऑक्सीजन की लगातार कमी हो रही है तथा दूषित गैसों का दबाव बढ़ रहा है।

वायु प्रदूषण से होने वाले असंतुलन का परिणाम हमें चातुर्दित दिखाई दे रहा है। इस समस्या के समाधान के लिये भारत सरकार ने इस दिशा में वायु (प्रदूषण, निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम– 1981 पारित किया। केंद्र में केंद्रीय प्रदूषण बोर्ड तथा विभिन्न प्रदेशों

में विभिन्न प्रदूषण नियंत्रण केंद्रों की स्थापना की गई। जिन उद्योगों द्वारा प्रदूषण बोर्ड के निर्देशों के बावजूद प्रदूषण नियंत्रण के संबंध में यथोचित कार्यवाही नहीं की जाती उनके विरुद्ध अभियोजनात्मक कार्यवाही की जाती है।

केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा परिवेशीय वायु की गुणवत्ता का मानक बनाया गया है, जो निम्न प्रकार है–

(सांद्रता–माइक्रोग्राम/घन मीटर)					
क्र.सं.	परिक्षेत्र	निलंबित सल्फर डाइ ऑक्साइड	सूक्ष्म	कार्बन मोनो ऑक्साइड	नाइट्रोजन के ऑक्साइड
1	औद्योगिक और मिश्रित वातावरण	120	500	5000	120
2	आवासीय और शहरी	80	200	2000	80
3	संवेदनशील क्षेत्र (ऐतिहासिक इमारतें, पर्यटन स्थल एवं अभयारण्य आदि)	30	100	1000	30

वायु प्रदूषण को रोकने हेतु प्रमुख उपाय निम्न प्रकार हैं–

1. वायु प्रदूषण रोकने में वृक्षों का सबसे बड़ा योगदान है। पौधे वायुमण्डलीय कार्बन डाइ ऑक्साइड अवशोषित कर हमें प्राणवायु ऑक्सीजन प्रदान करते हैं। अतः सड़कों, नहर पटरियों तथा रेल लाइन के किनारे तथा उपलब्ध रिक्त भू–भाग पर व्यापक रूप से वृक्ष लगाए जाने चाहिए ताकि हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ–साथ वायुमण्डल भी शुद्ध हो सके। औद्योगिक क्षेत्रों के निकट हरि पट्टियाँ विकसित की जानी चाहिए जिसमें ऐसे वृक्ष लगाए जायें जो चिमनियों के धुएँ से आसानी से नष्ट न हों तथा घातक गैसों को अवशोषित करने की क्षमता रखते हों। पीपल एवं बरगद आदि का रोपण इस दृष्टि से उपयोगी है।
2. औद्योगिक इकाइयों को प्रयास करना चाहिए कि वायुमण्डल में फैलने वाली घातक गैसों की मात्रा निर्धारित मानकों के अनुसार रखें जिसके लिये प्रत्येक उद्योग में वायु शुद्धिकरण यंत्र अवश्य लगाए जाएं।
3. उद्योगों में चिमनियों की ऊँचाई पर्याप्त होनी चाहिए ताकि आस–पास कम से कम प्रदूषण हो।
4. पेट्रोल कारों में कैटेलिटिक कनवर्टर लगाने से वायु प्रदूषण को बहुत हद तक कम किया जा सकता है। इस प्रकार की कारों में सीसा रहित पेट्रोल का प्रयोग किया जाना चाहिये।
5. घरों में धुआँ रहित ईंधनों को बढ़ावा देना चाहिये।

हमारा वायुमण्डल हमारे स्वास्थ्य को सर्वाधिक प्रभावित करता है, इस तथ्य के विपरीत हमने विभिन्न पर्यावरणीय तंत्रों को इस सीमा तक परिवर्तित कर दिया है जिसका परोक्ष दुष्परिणाम हमें स्पष्ट दिखाई देता है। इस स्थिति पर ध्यान न देना आत्महत्या सिद्ध होगा। अतः हम सबको मिलकर इस धरती पर प्रलयकारी परिस्थिति पैदा होने की आशंका को टालने के लिये निरंतर संघर्ष करना होगा। वायु प्रदूषण से उत्पन्न समस्याओं को हम भले ही रोक तो नहीं सकते, परंतु कुछ विशिष्ट सुरक्षा उपायों से कुछ हद तक पर्यावरण संरक्षण, संतुलन व विकास में योगदान कर सकते हैं।

2. **जल प्रदूषण** :– जल में ठोस कार्बनिक, अकार्बनिक पदार्थ, रेडियोएक्टिव तत्व, उद्योगों का कचरा एवं सीवेज से निकला हुआ पानी मिलने से जल प्रदूषित हो जाता है।

जल प्रदूषण के कारण :– जल प्रदूषण के मुख्य कारण निम्न प्रकार हैं–

1. उद्योगों से निकलने वाला कचरा– कई धातुयें जैसे– मरकरी, कैडमियम एवं लेड आदि अपने साथ निकालता है।
2. सीवेज का जल मानव तथा पशुओं के मल को अपने साथ ले जाता है जिसमें कई जीवाणु, हानिकारक पदार्थ जैसे यूरिया एवं यूरिक एसिड आदि मिले रहते हैं।
3. बहुत से साबुनों से निकलने वाला पानी भी जल को प्रदूषित करता है।
4. निर्माण कार्य में प्रयुक्त पदार्थ, इमारतों में प्रयोग होने वाले पदार्थ जैसे फास्फोरिक एसिड, कार्बोनिक एसिड, सल्फ्यूरिक एसिड आदि नदी में मिलकर जल प्रदूषण फैलाते हैं।

5. कुछ कीटनाशक पदार्थ जैसे डीडीटी, बीएचसी आदि के छिड़काव से जल प्रदूषित हो जाता है तथा समुद्री जानवरों एवं मछलियों आदि को हानि पहुँचाता है। अंततः खाद्य श्रृंखला को प्रभावित करते हैं।

जल प्रदूषण के प्रभाव :–

1. भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में होने वाली बीमारियों का एक मुख्य कारण प्रदूषित जल है। अतिसार, पेचिश, हैजा एवं टायफाइयड आदि दूषित जल के प्रयोग से ही होते हैं। जल में पाए जाने वाले विभिन्न प्रदूषकों से उत्पन्न होने वाली बीमारियाँ निम्न प्रकार हैं–

क्र. सं.	प्रदूषक	प्रभाव
1	आर्सेनिक	कैंसर, ब्लैक फुट रोग
2	कैडमियम	उच्च रक्तचाप, रक्तकणिकाओं का क्षय, मिचली, दस्त, हृदय रोग
3	बेरेलियम	कैंसर
4	फ्लोराइड	दांतों का फ्लोरोसिस रोग, हड्डियों का क्षय
5	सीसा	कैंसर, एनिमिया, उग्र शरीर विष, तंत्रिका तंत्र पर कुप्रभाव, गर्भवती महिलाओं में रोग
6	पारा	अत्यधिक विषैला, मस्तिष्क पर कुप्रभाव, केंद्रीय तंत्रिका तंत्र पर कुप्रभाव
7	क्रोमियम	चर्म रोग, खुजली, कैंसर
8	सिलेनियम	बालों का झड़ना, त्वचा संबंधी रोग
9	मल जल (सीवेज)	कुषोषण, पेचिस, आंत्र रोग
10	कार्बनिक रसायन डिटरजेंट आदि	जलीय जीवों पर कुप्रभाव, कृमि रोग, पेट संबंधी रोग
11	नाइट्रेट	मेटहीमोग्लोबैमिया
12	मैंगनीज	श्वांस रोग, निमोनिया, त्वचा रोग

2. सूक्ष्म–जीव जल में घुले हुये ऑक्सीजन के एक बड़े भाग को अपने उपयोग के लिये अवशोषित कर लेते हैं। जब जल में जैविक द्रव्य बहुत अधिक होते हैं तब जल में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है। जिसके कारण जल में रहने वाले जीव–जन्तुओं की मृत्यु हो जाती है।

3. औद्योगिक प्रक्रियाओं से उत्पन्न रासायनिक पदार्थ प्रायः क्लोरीन, अमोनिया, हाइड्रोजन सल्फाइड, जस्ता, सीसा, निकिल एवं पारा आदि विषैले पदार्थों से युक्त होते हैं। यदि यह जल पीने के माध्यम से अथवा इस जल में पलने वाली मछलियों को खाने के माध्यम से शरीर में पहुँच जायें तो गंभीर बीमारियों का कारण बन जाता है जिसमें अंधापन, शरीर के अंगों को लकवा मार जाना और श्वसन क्रिया आदि का विकार शामिल है। जब यह जल, कपड़ा धोने अथवा नहाने के लिये नियमित प्रयोग में लाया जाता है तो त्वचा रोग उत्पन्न हो जाता है।

मनुष्य द्वारा पृथ्वी का कूड़ा–कचरा समुद्र में डाला जा रहा है। नदियाँ भी अपना प्रदूषित जल समुद्र में मिलाकर उसे लगातार प्रदूषित कर रही हैं। वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि यदि भू–मध्य सागर में कूड़ा–कचरा डालना बंद न किया गया तो डॉलफिन और टूना जैसी सुंदर मछलियों का यह सागर शीघ्र ही इनका कब्रगाह बन जाएगा।

जल प्रदूषण रोकने के उपाय :–

1. अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग को रोका जाना चाहिए तथा उसके स्थान पर गोबर की खाद का प्रयोग किया जाना चाहिए।
2. रासायनिक साबुनों के बढ़ते प्रयोग को कम किया जाना चाहिए।
3. उद्योगों के कचरे को नदियों में मिलाने से पूर्व उसमें उपस्थित कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थों को नष्ट कर देना चाहिए।

3. **जलवायु परिवर्तन** :– पृथ्वी के उद्भव से लेकर आज तक इसमें निरंतर परिवर्तन हो रहा है। इसकी गति कभी तीव्र होती है तो कभी मंद। पर्यावरण के प्रमुख भौगोलिक घटक जैसे– ताप, वायुदाब, आर्द्रता, वायु वेग, वर्षा आदि जलवायु का निर्माण करते हैं। विगत वर्षों में जनसंख्या वृद्धि, औद्योगीकरण, वन विनाश, स्वचालित वाहनों में वृद्धि तथा रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से पर्यावरण को क्षति पहुँची है तथा जलवायु के विभिन्न तत्वों जैसे– ताप, वायुदाब, आर्द्रता, वायु वेग, वर्षा आदि में व्यापक परिवर्तन हुआ है। इन परिवर्तनों के कारण मानव अस्तित्व खतरे में है। जलवायु परिवर्तन के मुख्य कारण निम्न प्रकार हैं–

प्राकृतिक कारण :– मृदा क्षरण, बाढ़, तूफान, चक्रवात, भूस्खलन, ज्वालामुखी, दावाग्नि, सूखा, आँधी, तड़ित एवं भूकम्प आदि।

मानवीय कारण :– जनसंख्या वृद्धि, औद्योगीकरण, वन विनाश, यातायात के साधन, अनियोजित नगरीकरण, संसाधनों का असीमित विदोहन आदि।

जलवायु परिवर्तन के मुख्य प्रभाव निम्न प्रकार हैं –

1. ग्रीन हाउस प्रभाव तथा वैश्विक ताप में वृद्धि, 2. अम्लीय वर्षा, 3. ओजोन परत का क्षरण, 4. नाभिकीय दुर्घटनाएं, 5. प्रचण्ड अग्निकाण्ड, 6. भू–स्खलन, 7. मरुस्थलीकरण, 8. मृदाक्षरण, 9. पर्यावरण प्रदूषण, 10. बाढ़, 11. अकाल, 12. भूकम्प, 13. तूफान।

4. **वैश्विक ताप वृद्धि** :– सामान्य परिस्थितियों में पृथ्वी का ताप इससे टकराने वाले सूर्य विकिरणों तथा अंतरिक्ष में वापस लौट जाने वाली किरणों द्वारा नियंत्रित होता है। जब वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता बढ़ जाती है तो इस गैस की मोटी परत किरणों को परावर्तित होने से रोकती है। यह मोटी ग्रीन हाउस की काँच की दीवार तथा कार की खिड़की के काँच की भाँति होती है। यह दोनों ही गर्मी को बाहर विकिरित होने से रोकती है। इसे 'ग्रीन हाउस प्रभाव' कहते हैं। यही क्रिया प्रकृति में भी होती है। यहाँ कार्बन डाइऑक्साइड, हाइड्रोजन, ओजोन, जलवाष्प, मीथेन, नाइट्रोजन ऑक्साइड तथा क्लोरोफ्लोरोकार्बन गैसें एक मोटी परत पृथ्वी के वातावरण में बना लेती हैं जो गलास हाउस के काँच की भाँति ही कार्य करती है अर्थात सूर्य उष्मा जो भीतर आती है पूरी की पूरी वापस नहीं जाने पाती जिससे विश्व स्तर पर वातावरण की निचली परत में वायु का ताप बढ़ जाता है। बढ़ी हुई कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा को समुद्रों द्वारा अवशोषित किया जा सकता है परंतु औद्योगीकरण तथा ऊर्जा के अत्यधिक उपयोग से समुद्री अवशोषण क्षमता की तुलना में वायु मण्डल में अधिक कार्बन डाइ ऑक्साइड उत्सर्जित हो रही है। इस प्रकार वायुमण्डल में कार्बन डाइ ऑक्साइड की सांद्रता निरंतर बढ़ रही है। कार्बन डाइ ऑक्साइड पृथ्वी के ताप में 50 प्रतिशत एवं क्लोरोफ्लोरोकार्बन में 20 प्रतिशत तक की वृद्धि करती है।

कुछ अन्य गैसें जैसे सल्फर डाइ ऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड तथा क्लोरोफ्लोरो कार्बन भी ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करते हैं। विशेषज्ञों के अनुसार 2050 में पृथ्वी का ताप 1 से 5 डिग्री तक बढ़ जाएगा। ताप बढ़ने से ध्रुवों पर अधिक प्रभाव पड़ेगा। ग्रीनलैंड, आइसलैंड, नार्वे, साइबेरिया एवं अलास्का इससे सर्वाधिक प्रभावित होंगे। ध्रुवीय बर्फ पिघल जायेगी। 5 डिग्री ताप वृद्धि से समुद्र स्तर में 5 मीटर की वृद्धि होगी जो सेनफ्रांसिस्को एवं शंघाई जैसे उच्च जनसंख्या वाले तटीय शहरों पर प्रभाव डालेगा।

वैश्विक तापवृद्धि से उत्पन्न प्रमुख समस्याएं निम्न प्रकार हैं –

1. जैविक विविधता में तेजी से कमी आएगी तथा महत्त्वपूर्ण प्राकृतिक स्रोतों का ह्रास होगा।
2. 1 डिग्री तापवृद्धि अक्षांश के 100 किमी परिवर्तन के बराबर होगा।
3. बढ़े हुए ताप से विश्व के अनेक भागों में तीव्र तूफान आएंगे। उन क्षेत्रों में भी तूफान आ सकते हैं जहाँ पहले कभी ऐसा नहीं होता था।
4. ताप बढ़ने से वर्षा एवं मानसून के स्वरूप में परिवर्तन होगा। कहीं पर सूखा होगा तथा कहीं अत्यधिक वर्षा होगी। इससे मृदा क्षरण बढ़ेगा।
5. पर्वत शिखरों एवं ग्लेशियरों की बर्फ पिघलने से समुद्र का स्तर बढ़ेगा।
6. ताप वृद्धि से समुद्र गर्म होगा जिससे बांग्लादेश, भारत, मिश्र, इण्डोनेशिया आदि में बाढ़ आ सकती है।
7. वैश्विक तापवृद्धि से समुद्री पारिस्थिकी तंत्र अत्यधिक बिगड़ जाएगा।
8. तटीय शहरों की बाढ़ वहाँ संक्रामक रोग फैला सकती है।

वैश्विक ताप वृद्धि को नियंत्रित करने के उपाय :–

1. ऊर्जा उत्पादन व उपयोग में सुधार करना।
2. कार्बनिक ईंधन का प्रयोग कम करके उसके स्थान पर हाइड्रोजन ईंधन का प्रयोग किया जाए।
3. कार्बन मुक्त ऊर्जा स्रोत जैसे सूर्य, वायु एवं नाभिकीय ऊर्जा का विकास किया जाए।
4. वन क्षेत्र को कटने से रोकना एवं वनावरण में वृद्धि का प्रयास करना।
5. **अम्लीय वर्षा** :– वायुमण्डल में विद्यमान कार्बन डाई ऑक्साइड गैस पानी में घुलकर कार्बोनिक अम्ल बनाती है। वर्षा के जल में कार्बोनिक अम्ल मिले होने के कारण वर्षा के जल का पी–एच सामान्य से कुछ कम (लगभग 6.5) होता है। घातक गैसें जैसे सल्फर डाइ ऑक्साइड, सल्फर ट्राई ऑक्साइड तथा नाइट्रोजन ऑक्साइड आदि, जो वायु प्रदूषण के कारण वायुमण्डल

में विद्यमान रहती हैं, वर्षा जल को अवशोषित कर उसका पी–एच और कम कर देती हैं। यही अम्लीय वर्षा कहलाती है। भारत के कुछ प्रमुख महानगरों में वर्षा का पी–एच निम्न प्रकार पाया गया–

1. कोलकाता–5.8, 2. चेन्नई–5.85, 3. दिल्ली–6.21, 4. मुंबई–4.8।

प्रमुख गैसें जो अम्लीय वर्षा हेतु उत्तरदायी हैं, निम्न प्रकार हैं –

1. **सल्फर डाइ ऑक्साइड** – यह पानी के साथ घुलकर सल्फ्यूरिक अम्ल बनाती है।
2. **सल्फर ट्राई ऑक्साइड** – यह पानी के साथ घुलकर सल्फ्यूरस अम्ल बनाती है।
3. **हाइड्रोजन सल्फाइड** – यह वायुमण्डल में हाड्रोजन मूलकों के साथ सल्फर डाइ ऑक्साइड बनाती है।
4. **नाइट्रोजन के ऑक्साइड** – यह प्रकाश ऑक्सीकरण द्वारा नाइट्रस अम्ल बनाती है।
5. **कार्बन डाइ ऑक्साइड** – यह पानी के साथ घुलकर कार्बोनिक अम्ल बनाती है

अम्लीय वर्षा के प्रमुख स्रोत :– सल्फर डाइ ऑक्साइड कोयले के जलने, विद्युत शक्ति संयंत्रों एवं पेट्रोलियम शोधन से सल्फर डाइ ऑक्साइड गैस निकलती है। इसी के साथ कुछ मात्रा में सल्फर ट्राइ ऑक्साइड भी निकलती है। प्राकृतिक स्रोतों में ज्वालामुखी प्रमुख है। हाइड्रोजन सल्फाइड गैस प्राकृतिक रूप से सल्फर को अपचयित करने वाले जीवाणुओं से प्राप्त होती है तथा दलदली भूमि से निकलती रहती है। यह गैस जीवाष्म ईधनों के आंशिक रूप से जलने एवं अनेक उद्योगों में द्वितीयक उत्पाद के रूप में प्रकट होती है। नाइट्रोजन की विभिन्न ऑक्साइड गैसें अनेक जीवाश्म इंधनों के ज्वलन तथा विस्फोटक उद्योगों से निकलकर वायुमण्डल में मिल जाती हैं।

आजकल होने वाली 60 से 70 प्रतिशत अम्लीय वर्षा सल्फर के विभिन्न ऑक्साइड से होती है। 30 से 40 प्रतिशत अम्लीय वर्षा नाइट्रोजन के ऑक्साइड एवं अन्य कारणें से होती है।

अम्लीय वर्षा के कुप्रभाव :– अम्लीय वर्षा के अत्यंत घातक परिणाम होते हैं जिनमें प्रमुख निम्न प्रकार हैं–

1. यह जल, स्थल, वायु, वनस्पतियों, जीव जन्तुओं एवं इमारतों सभी को क्षति पहुँचाती है।
2. झीलों, तालाबों नदियों आदि का जल अत्यधिक अम्लीय हो जाता है जिसे अम्ल सदमा कहते हैं। इससे पानी में रहने वाले जीव प्रभावित होते हैं।
3. झीलों, तालाबों आदि से पानी रिस कर भू–गर्भ में स्थित विभिन्न धातुओं जैसे तांबा, एल्युमिनियत, कैडमियम आदि से क्रिया करके विभिनन जहरीले यौगिक बनाता है जो प्राणियों को प्रभावित करते हैं।
4. अम्लीय वर्षा से त्वचा रोग तथा एलर्जी होती है।
5. अम्लीय जल जब घरों में जस्ता, सीसा या ताम्बे के पाइपों से गुजरता है तो इस जल में धातुओं की अधिकता हो जाती है जिससे अतिसार व पेचिश जैसे रोगों की संभावना बढ़ती है।
9. पौधों की पत्तियों में उपस्थित पर्णहरित का विघटन हो जाता है जिससे पत्तियों का रंग परिवर्तित हो जाता है।
10. पौधों की पत्तियाँ, पुष्प एवं फल असमय झड़ जाते हैं।
11. प्राचीन इमारतों का क्षरण होता है जिसे ''स्टोन कैंसर'' कहते हैं।

आगरा से 40 किमी दूर मथुरा का तेल शौधक कारखाना है जो प्रतिदिन 25 से 30 टन सल्फर डाइ ऑक्साइड गैस वायुमण्डल को देता है। इसी कारण आगरा के वायुमण्डल में सल्फर डाइ ऑक्साइड की मात्रा 1.75 माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर है। इसके कारण ताजमहल पर कहीं–कहीं संक्षारक धब्बे दिखाई देते हैं।

अम्लीय वर्षा से स्वीडन की बीस हजार झीलों की मछलियाँ मर गई। जर्मनी के जंगलों को अम्लीय वर्षा से अपार क्षति पहुँची है। अम्लीय वर्षा को नियत्रिंत करने के लिये सल्फर एवं नाइट्रोजन के ऑक्साइडों के प्रयोग में कमी लाना आवश्यक है।

6. **पॉलीथीन प्रदूषण** :– प्राथमिक रूप से प्लास्टिक थैलों, प्लास्टिक फिल्म व बोतल आदि जैसे वाहकों में प्रयुक्त होने वाली पॉलीथीन सर्वप्रथम संयोगवश संश्लेषित हुई। वर्ष 1898 में जर्मन रसायनशास्त्री हास वान पेचमान द्वारा डाइ एजोमीथेन को गर्म करते समय पॉलीएथीलीन या पॉलीथीन सर्वप्रथम संयोगवश संश्लेषित हुई। सर्वाधिक प्रयोग होने वाली प्लास्टिक उनके सहयोगियों यूजेन बामबर्गर व फ्रेडिक शीरनर ने इस वेत पदार्थ जो –CH2 – की लंबी श्रृंखला धारित करती है, को पॉलीमेथीलीन नाम दिया। पॉलीएथीलीन या पॉलीथीन का वैज्ञानिक (आइयूपीएसी) नाम पॉली ईथीन या पॉलीमेथीलीन है। इसका वार्षिक वैश्विक उत्पादन लगभग 8 करोड़ टन है। विभिन्न प्रकार के

ज्ञात पॉलीएथीलीन का रासायनिक सूत्र (C2H4)nH2 है। इस प्रकार सामान्यतया पॉलीएथीलीन समान कार्बनिक यौगिकों का मिश्रण है जो द के मान के साथ परिवर्तित होता है। उद्योगों में व्यावहारिक रूप से प्रयुक्त होने वाली संश्लेषित पॉलीएथीलीन का आविष्कार वर्ष 1933 में एरिक फॉसेट व रेनाल्ड गिडसन ने संयोगवश किया था।

पॉलीथीन के भौतिक गुण :– सामान्य रूप से व्यापारिक कार्यों में प्रयुक्त होने वाले मध्यम व उच्च घनत्व वाले पॉलीथीन 120 डिग्री सेंटीग्रेड से 180 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान के मध्य पिघलता है। अतः प्रयुक्त होने के उपरांत जहाँ फेंका जाता है– वहीं अत्यंत लम्बे समय तक बने रहकर सामान्य क्रियाकलाप बाधित करता है।

रासायनिक गुण :– अधिकांश एलडीपई (लो डेंसिटी पॉलीथीन, मिडिल डेंसिटी पॉलीथीन एवं हाई डेंसिटी पॉलीथीन) अत्यंत उत्कृष्ट कोटि के रासायनिक प्रतिरोधक होते हैं, अर्थात तीव्र अम्लीय या तीव्र क्षारीय पदार्थ से अभिक्रिया नहीं करते हैं। पॉलीथीन, नीली ज्वाला देते हुए धीरे–धीरे जलता है। जलने पर पॉलीथीन से पैराफीन की गंध आती है। लगातार जलाने पर ज्वाला समाप्त होने पर बूँद के रूप में हो जाता है। कमरे के तापमान पर क्रिस्टल नहीं घुलते हैं। सामान्यतया टालूईन या जाईलीन जैसे ऐरोमेटिक हाइड्रोकार्बन एवं ट्राई क्लोरोइथेन या ट्राई क्लोरोबेंजीन जैसे क्लोरीनेट विलायक में पॉलीथीन उच्च तापमान पर घुलता है।

कम मूल्य, सहज रूप से सुलभ होने व अत्यंत उपयोगी होने के कारण पॉलीथीन का प्रयोग अत्यंत तेजी से बढ़ रहा है। कागज के थैलों, कुल्हड़ों, कागज की प्लेटों का चलन पॉलीथीन का बढ़ते प्रयोग के कारण समाप्त होता जा रहा है। आसानी से उपलब्ध होने के कारण सामान क्रय करने जाते समय कपड़े का थैला ले जाने की प्रवृत्ति समाप्त होती जा रही है। पॉलीथीन की बढ़ती लोकप्रियता व प्रयोग के कारण समाज व पर्यावरण के समक्ष नई समस्याएं व चुनौतियाँ उत्पन्न हो रही हैं, इसका मुख्य कारण पॉलीथीन का अपघटन न होना है। पॉलीथीन के अपघटन न होने से शहरों, गाँवों व यहाँ तक कि दुर्गम वन क्षेत्रों में भी प्रयोग के पश्चात फेंके गये पॉलीथीन का ढेर बहुत लंबे समय तक पड़ा रहता है। इस कारण उत्पन्न होने वाली समस्याएं एक दृष्टि में–

पॉलीथीन थैली के प्रयोग से होने वाली हानि :–

1. प्लास्टिक थैले में मुख्यतः जाइलीन, एथीलीन ऑक्साइड एवं बेंजीन का प्रयोग होता है। यह सभी टॉक्सिक रसायन हैं जो मानव स्वास्थ्य के लिये घातक हैं।
2. भूमि पर प्लास्टिक इकट्ठा होने पर वह लंबे समय तक गलती नहीं है। प्लास्टिक से भरे स्थान पर पौधे नहीं उगते हैं तथा यह भूमि की उर्वरा शक्ति को धीरे–धीरे समाप्त करती है।
3. प्लास्टिक के थैले में फेंकी हुई खाद्य सामग्री को खाकर गाय, बंदर एवं अन्य जीव तड़प–तड़प कर मर जाते हैं। नदियों या समुद्र के किनारे फेंकी गई पॉलीथीन थैली को खाकर मछलियाँ, डॉल्फिन, कछुए एवं अन्य समुद्री जीव मर जाते हैं।
4. पॉलीथीन थैली या प्लास्टिक को जलाने पर जहरीली गैस निकलती है, जो वायुमण्डल के लिये हानिकारक है।
5. पॉलीथीन या प्लास्टिक भूमि, जल एवं वायु तीनों के लिये अभिशाप है। धरती पर इसके गलने में 400 वर्ष से भी अधिक का समय लगता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. पर्यावरण विज्ञान द्वारा डॉ0 डी. बी. सिंह, रमेश पब्लिकेशन्स हाउस, 01 जनवरी 2016.
2. पर्यावरण एवं परिस्थितिकी द्वारा नीरज नचिकेता, जी.के. पब्लिकेशन 2018.
3. परिस्थितिकी एवं पर्यावरण द्वारा एस. के. ओझा, बौद्धिक प्रकाशन 01 जनवरी 2016.
4. भारत का भूगोल द्वारा एस. के. ओझा, बौद्धिक प्रकाशन 01 जनवरी 2016.
5. भूमंडलीकरण तथा पर्यावरण द्वारा गुल्लीबाबा पब्लिकेशन हाउस प्रा. लिमिटेड.
6. पर्यावरण के प्रहरी सारस्वत ट्रस्ट 1 अप्रैल 2015.
7. पर्यावरण कितने जागरूक है हम द्वारा रश्मि अग्रवाल निरूपमा प्रकाशन 2015.
8. पर्यावरण अध्ययन द्वारा मधु बासु, एम. चॉद कम्पनी 1 दिसम्बर 2010.

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

लौकिक जगत के धर्म में ईश्वर का महत्व

डॉ. पंकज शर्मा (शोध निर्देशक)
एसो, प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, शोध एवं स्नातकोत्तर इतिहास विभाग, नेहरू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ललितपुर (उ.प्र.)
ऋषिकेश (शोधार्थी)
विषय–इतिहास, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी, झाँसी (उ.प्र.)

धर्म एक ऐसा प्रचलित शब्द है जिसका प्रयोग हम प्रायः दैनिक जीवन में करते है। यदि किसी साधारण जन के समक्ष 'धर्म' शब्द का प्रयोग किया जाए तो उसके मन में प्रायः किसी विशेष उपासना–स्थल, उसमें विशेष प्रकार से पूजा करने वाले व्यक्तियों, जन्म, नामकरण, विवाह, मृत्यु आदि महत्वपूर्ण अवसरों पर सम्पन्न किये जाने वाले विशेष कृत्यों या अनुष्ठानों तथा विशेष प्रकार के वस्त्र धारण किये हुए ऐसे लोगों की छवि उभरकर प्रगट होती है, जिसे धार्मिक व्यक्ति कहते है। अतः एक सामान्य व्यक्ति धर्म शब्द का अर्थ पूजा–पाठ सम्बन्धी धर्मकाण्ड, प्रार्थना, विशेष पुस्तकें, भवन, वस्तु, वस्त्र आदि से लगाते हैं। धर्म शब्द का उपरोक्त अर्थ व्यावहारिक रूप से सत्य प्रतीत होता है, परन्तु दार्शनिक दृष्टि से संतोषप्रद नहीं है। धार्मिक अनुष्ठान, विशेष उपासना स्थल, प्रार्थना अथवा पूजा–पाठ सम्बन्धी कर्मकाण्ड, पवित्र ग्रन्थ इत्यादि धर्म के महत्वपूर्ण अंग हैं, जिन्हें हम धर्म का बाह्य पक्ष मान सकते है और सामान्य लोग भी धर्म के इस बाह्य पक्ष को अत्यधिक महत्व देते है। अतः धर्म के अर्थ को स्पष्ट करने में बाह्य पक्ष का महत्वपूर्ण योगदान है। धर्म के यदि व्यावहारिक पक्ष के साथ–साथ उसके बौद्धिक या सैद्धान्तिक पक्ष का अध्ययन किया जाए तो वह दार्शनिक दृष्टि से कुछ हद तक खरा उतरने में सहायक सिद्ध हो सकता है। अतः धर्म के मूल तत्वों को समझना अति आवश्यक है, जो किसी न किसी रूप में विश्व के सभी धर्मों में विद्यमान है, ये मूल तत्व निम्नलिखित हैं –

- मनुष्य को दुख से मुक्ति का आश्वासन।
- अलौकिक अथवा अतिमानवीय शक्ति में विश्वास करना।
- अलौकिक शक्ति या सत्ता की पूजा अथवा उपासना जो प्रत्येक धर्म में अनिवार्य रूप से विद्यमान रहती है और इसके बिना किसी धर्म की कल्पना नहीं की जा सकती।
- उन समस्त व्यक्तियों, स्थानों, पुस्तकों एवं वस्तुओं को पवित्र मानना जिसका सम्बन्ध उस अलौकिक सत्ता से हैं।

अतः दार्शनिक दृष्टि से धर्म को समझने के लिये वही विचार सन्तोषजनक तथा युक्तिसंगत माने जा सकते हैं, जिसमें विश्व के सभी धर्मों के मूलतत्व सम्मिलित हो।

भारतीय संस्कृति में धर्म शब्द का प्रयोग अत्यन्त व्यापक स्वरूप में हुआ है, परन्तु अंग्रेजी भाषा में प्रयुक्त 'रिलीजन' शब्द से धर्म का सामान्य अर्थ बाह्य कर्मकाण्डों व धार्मिक क्रिया–विधियों में लगाया जाता है। अतः 'रिलीजन' शब्द से सीमित अर्थ निकलता है, जबकि धर्म शब्द का अर्थ बाह्य कर्मकाण्डों के साथ–साथ एक सांस्कृतिक संगठन एवं परम आध्यात्मिकता को दर्शाता है। धर्म में जहाँ एक तरफ देवी–देवता, धार्मिक विधियाँ, कर्मकाण्ड, स्वर्ग–नरक तथा अन्य धार्मिक सिद्धान्तों का समावेश रहता है, तो वही दूसरी ओर ऐसे अनेक नियम व विधि–विधान को बनाया गया है, जिनसे व्यक्ति के अभ्युदय के साथ –साथ समाज की आध्यात्मिक तथा भौतिक प्रगति भी हो सके। नित्य धर्म, राज्य धर्म, कुल धर्म, आश्रम धर्म, वर्ण धर्म, स्व धर्म आदि शब्द धर्म की प्रधानता का द्योतक है। अतः धर्म आचारमूलक, कर्तव्यमूलक, न्यायमूलक, अध्यात्ममूलक तथा मोक्षमूलक अवधारणा है।

धर्म सभी प्रकार की नैतिकताएँ, सभी प्रकार के अनुशासन एवं सभी प्रकार के नियमन को अपने में संकलित किये हुए है। धर्म के अनेक रूप है यथा पुत्रधर्म, सेवक धर्म, पति धर्म, पत्नी धर्म इत्यादि। अंग्रेजी भाषा में राजधर्म के लिए ड्यूटी (कर्तव्य) शब्द का प्रयोग किया जाता है, तो कानून बताने के लिए लॉ शब्द का प्रयोग किया जाता है। हमारे यहाँ मान्यता है कि जल का भी धर्म है, वायु का भी धर्म है तो इसे अंग्रेजी में इसे नेचर की संज्ञा दी गई है। मानव का एक जो स्वभाव है कि वह जिस प्रकार चाहता है, उसी प्रकार ईश्वर की उपासना कर सकता है, उसको भी धर्म कहा गया है यथा बौद्ध धर्म, जैन धर्म इसे अंग्रेजी में पंथ या मत कहा गया है। अतः धर्म अर्थबोध में बहुआयामी है। अतः धर्म का पर्याय है –कर्तव्य से, न्याय से, दण्ड से, प्रकृति से, पुण्य से, श्रेय से, सुकृत से, वृषकृत से (अमरकोश), स्वभाव से, आचार से, उपमाकृत से, अहिंसा

से (उपनिषद), धनु से, यम से, सोमप से (मेदिनी कोश), सत्संग से, अर्हत से (हेमचन्द्र का) आदि से हैं।

अतः धर्म का परिणाम यह निकलता है कि इसमें मनोविज्ञान, इतिहास, समाजशास्त्र तथा स्वायत्त धार्मिक अध्ययन शास्त्र (फेनोमेनोलॉजी) का समावेश है।[1] मिथक, कर्मकाण्ड, शिक्षाएँ एवं सिद्धान्त, विद्या–मीमांसा (थिओलॉजी), अलौकिक अनुभव तथा सामाजिक एवं नैतिक तत्व इत्यादि धर्म के कतिपय प्रमुख अवयव और आयाम है।[2] सन् 1868 ई0 में फीड्रिक मैक्समूलर ने धर्म के सम्बन्ध में उपर्युक्त अवयवों पर चर्चा के लिये रेलिजन्सवाइजेन्शाफ्ट अर्थात 'धर्मो के विज्ञान' पद का प्रयोग किया था।[3] धर्म के इन्हीं अवयवों के आधार पर धर्म के वहुआयामी अर्थ एवं स्वरूप का ज्ञान प्राप्त होता है।

अतः धर्म 'स्व' और 'पर' का भेद समाप्त करने वाला विशुद्ध कल्याणकारी तत्व है जो मानव के आत्मिक एवं परमार्थिक उत्कर्ष का द्योतक है। व्यक्ति का ईश्वर से परम सत्ता से सच्चा सम्बन्ध स्थापित करने में धर्म एक प्रमुख नियामक तत्व है। यह मानव जीवन के सभी पहलुओं को प्रभावित करने वाली एक व्यापक अभिवृत्ति है जो सर्वाधिक शक्तिशाली, पवित्र तथा मूल्यवान समझे जाने वाले आदर्श और अलौकिक उपास्य विषय के प्रति अखण्ड आस्था एवं पूर्ण प्रतिबद्धता के फलस्वरूप पैदा होती है, जो मनुष्य के दैनिक आचरण तथा प्रार्थना, पूजा–पाठ, जप–तप आदि बाह्य कर्मकाण्ड में अभिव्यक्त होती है।[4] परिणामतः धर्म वह सर्वांगपूर्ण अभिवृत्ति है जो किसी समाज द्वारा समादृत आदर्शपूर्ण विषय के प्रति एवं अन्तर्बद्धता हेतु व्यक्ति को सम्पूर्ण जगत् के प्रति अभिमुख करती है। यह मानव के कर्तव्य भावना को जाग्रत करने में सहायक सिद्ध होती है, जिससे उसकी कार्यक्षमता, मानसिक योग्यता और आचारगत् क्रिया विकसित हो सके।

धर्म एवं ईश्वर :– धार्मिक समस्याओं में सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथा जटिल समस्या है, ईश्वर के अस्तित्व की। प्राचीन काल से केवल धर्म और दर्शन पर ही नहीं, अपितु मनुष्य के सामान्य जीवन पर भी ईश्वर के अस्तित्व से सम्बन्धित विश्वास का बहुत गहरा तथा व्यापक प्रभाव रहा है। वास्तव में ईश्वर भौतिक पदार्थ की तरह कोई इकाई नहीं है, जिसे हम सामान्य इन्द्रियों से स्पर्श कर सकें। कुछ सम्प्रदायों को छोड़कर विश्व के अधिकतर सम्प्रदाय शताब्दियों से ईश्वर की सत्ता में विश्वास करते हैं और उनके इस विश्वास के कारण ही उनके विचारों तथा आचरण को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। परिणामतः धर्म पर विचार करने वाले दार्शनिक के लिए इस प्रश्न का विशेष महत्व है कि ईश्वर के अस्तित्व का सही–सही अर्थ क्या है।

ईश्वर के अस्तित्व के सम्बन्ध भारतीय दर्शन दो भागों में विभाजित हो जाता है। प्रथम आस्तिक दर्शन तथा द्वितीय नास्तिक दर्शन। आस्तिक दर्शन के विचारधारा वाले सम्प्रदाय ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं जैसे सांख्य दर्शन, योग दर्शन, न्याय दर्शन, वैशेषिक दर्शन, मीमांसा दर्शन तथा वेदान्त दर्शन इत्यादि।[5] दूसरी तरफ नास्तिक दर्शन के विचारधारा वाले सम्प्रदाय ईश्वर के अस्तित्व को अस्वीकार करते हैं जैसे बौद्ध दर्शन, जैन दर्शन एवं चर्वाक दर्शन इत्यादि।[6] आस्तिक दर्शन ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण देता है, वहीं दूसरी ओर नास्तिक दर्शन ईश्वर के अस्तित्व पर प्रश्न उठाता है।

आस्तिक दार्शनिक ईश्वर को एक ऐसी स्वतंत्र एवं वस्तुपरक सत्ता मानते हैं जो सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक, अत्यन्त दयालु, शाश्वत, अपरिवर्तनीय, असीम तथा दृष्टियों से पूर्ण है और जो विश्व का रचयिता या आदि कारण शासक एवं संचालक है। हिन्दू, इस्लाम, सिख, ईसाई, यहूदी आदि सभी धर्म का एक विशेष धार्मिक ग्रन्थ है, जिसमें ईश्वर की पूजा या उपासना का वर्णन है। धार्मिक ग्रन्थों का अनुसरण करके ही प्रत्येक धर्म का अनुयायी अपने जीवन में परम आनन्द को प्राप्त करने के लिए नित्य प्रयत्नशील रहता है।

नास्तिक दर्शन में ईश्वर की सत्ता के लिए कोई स्थान नहीं है। प्रारम्भिक बौद्ध दर्शन पूर्णरूप से अनीश्वरवादी था। महात्मा बुद्ध ने स्वयं केवल चार आर्य सत्यों के अनुशीलन पर बल दिया था, इसे ही दुःख निवृत्ति अथवा निर्वाण लाभ हेतु पर्याप्त माना था।[7] उनके मतानुसार ईश्वर सम्बन्धी प्रश्न अव्याकृत है, ईश्वर चिन्तन अनुपयोगी एवं अनावश्यक है। इसी प्रकार जैन दर्शन भी अनीश्वरवादी है। जैन धर्म का अर्थ है स्वयं पर विजय प्राप्त करना। जैन अपनी कर्म साधना द्वारा उस मार्ग पर चल पड़ता है जो तीर्थंकरों द्वारा प्रतिपादित किया गया है। जैन धर्मानुसार सृष्टि आदिकाल से अपने ही आदि तत्वों के आधार पर गतिमान है। उनके अनुसार अस्तिकाय द्रव्य के दो भेद है–जीव और अजीव। जीव चेतन द्रव्य और अजीव अचेतन द्रव्य है। अजीव के चार भेद है– पुद्गल, धर्म, अधर्म, तथा आकाश।[8] ये तत्व शाश्वत, नित्य और

अनश्वर हैं। अतः इनसे निर्मित सृष्टि भी शाश्वत, नित्य और अनश्वर हैं। सृष्टि कर्त्ता कोई ईश्वर नहीं है। भारतीय विचारधारा में निरीश्वरवादी दर्शनों की कमी नहीं है। चर्वाक दर्शन स्पष्टतः निरीश्वरवादी विचारधारा को मानता है।[9] चर्वाक ने प्रत्यक्ष को ही ज्ञान का एकमात्र साधन माना है। प्रत्यक्ष से ईश्वर का ज्ञान न होने के कारण ईश्वर को असत् माना है। चर्वाक के अनुसार, चार महाभूतों – पृथ्वी, अग्नि, वायु और जल से ही चेतन एवं अचेतन तत्वों का उद्‌भव एवं विकास हो जाता है,[10] यहाँ तक कि इन्हीं तत्वों के संयोग से चैतन्य की भी उत्पत्ति स्वीकार की जाती है।

उपरोक्त दर्शन के आधार पर ईश्वर के अस्तित्व का विचारयुद्ध गतिमान है, परन्तु एक ईश्वर को मानना मानवीय बुद्धि की दृष्टि से अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है। एक ईश्वर में विश्वास ही एकेश्वरवाद है। यह एकेश्वरवाद उतना ही पुराना है, जितना मानव समाज। वास्तव में यह एक भ्रान्त धारणा है कि एक ईश्वर को मानना किसी व्यक्ति विशेष या पैगम्बर ने बहुत बाद में सिखाया था। यह ऐतिहासिक सत्य है कि एकेश्वरवाद एक आदि विचारधारा है। भारतीय दर्शन के मूल सिद्धान्त में भी एकेश्वरवाद की धारणा विद्यमान थी।

सन्दर्भ–ग्रन्थ सूची :–

1. जोखिम वाच, ''सोशियोलॉजी ऑफ रिलिजन'', सं0–1944, पृ0सं0–1,2
2. श्रीमाली, कृष्ण मोहन, ''धर्म, समाज और संस्कृति'', सं0–2011, पृ0सं0–197
3. द्रष्टव्य मर्सिया इलियड, ''दि सेक्रेड एण्ड दि प्रोफेन'', सं0–1961, पृ0सं0–216
4. वर्मा, वेद प्रकाश, वही, पृ0सं0–3
5. पाठक, राममूर्ति, ''भारतीय दर्शन की समीक्षात्मक रूपरेखा'', सं0–2004, पृ0सं0–6
6. वही
7. वही, पृ0सं0–9
8. वही, पृ0सं0–88
9. वही, पृ0सं0– 8
10. वही, पृ0सं0– 10

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में सामाजिक परिपक्वता एवं अहिंसात्मकता के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन

शैलेश यादव
शोध छात्र, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
डां. प्रशान्त कुमार स्टालिन
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सारांश :– प्रस्तुत शोध अध्ययन में मऊ जिले के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में सामाजिक परिपक्वता एवं अहिंसात्मक का अध्ययन किया गया है। अध्ययन हेतु मऊ जिले के 15 स्कूलों का चयन किया गया है जिसमें कुल 150 विद्यार्थियों का चयन प्रतिदर्श के रुप में किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन के आकड़ों के संकलन के हेतु नलिनी राव द्वारा निर्मित मानकीकृत सामाजिक परिपक्वता मापनी एवं डा0 वाई0 के नागले द्वारा निर्मित नान–वाइलेन्ट् एटीट्यूड स्केल का चयन किया। प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण के लिए t टेस्ट एवं घूर्णन आघूर्ण सहसम्बन्ध विधि का प्रयोग किया गया एवं निष्कर्ष में पाया गया की माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में सामाजिक परिपक्वता एवं अहिसात्मक के बीच सार्थक अन्तर नहीं है।

मूलशब्द :– माध्यमिक स्तर, सामाजिक परिपक्वता, अहिंसात्मकता।

प्रस्तावना :– मनुष्य के लिए शिक्षा अमूल्य निधि है। इसी के आधार पर वह अपने भविष्य के विकास के लिए आधार शिला तैयार करता है, जिससे मानव का जीवन सुखी एवं सम्पन्न हो सके। जब बालक का प्रवेश इस नव संसार में होता है तो उसका व्यवहार पशु के समान होता है। वह अपनी ज्ञानेन्द्रियो से प्रेरित होकर आचरण करता है। शिक्षा के द्वारा ही बालक का धीरे–धीरे सर्वागीण विकास होता है। इस प्रकार शिक्षा केवल स्कूल, कालेज, महाविद्यालय तक सीमिम नहीं है अपितु सम्पूर्ण मानव जीवन को अभिव्यक्त करती है। शिक्षा के नवीन दृष्टिकोण मानव जीवन से जुड़े प्रत्येक हिस्से को स्पर्श कर रहे है। जिसका मानव से अटूट सम्बन्ध है। जैसे–जैसे शैक्षिक प्रगति हुई मानव ने नवीन ऊँचाई को छुआ है। मानव समाज की नवीन आवश्यकता और प्रतिस्पर्धा के बीच सम्बन्ध विकसित होता गया है। इसी आवश्यकता और प्रतिस्पर्धा के बीच सन्तुलन के लिए पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन के जागरुकता के दृष्टिकोण का सुत्रपात हुआ है। समाज की सामाजिक परिपक्वता एवं अहिंसात्मकता के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन करना शोधकर्ता का विषय है।

सामाजिक परिपक्वता :– सर्वागींण विकास एक बहुयामी प्रक्रिया है, इसमें अनेक उद्देश्यों का तत्व समाहित होता है। समाजिक विकास के क्रम में शिशु का बौद्धिक पक्ष ही नहीं शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक पक्ष भी अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विकास के सभी चरण एक दूसरे में अन्तर्वलित है। बालक सामाजिक वातावरण से परिचित होते हुए परिपक्वता की ओर अग्रसर करता है। जिसके फलस्वरुप वह ने केवल शारीरिक, मानसिक, संवेगिक व्यवहार में अपितु सामाजिक रुप में भी प्रगति करता है। सामाजिक उन्नति के फलस्वरुप उसे सामाजिक परिपक्वता की धरोहर प्राप्त होती है। सामाजिकता मानव के व्यवहार को सकारात्मक एवं नकारात्मक रुप में प्रभावित करती है। सामाजिक समूह, औपचारिकता, अनौपचारिकता आधुनिक परिदृश्य की आधारशीला है जो वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति के लिए एक सशवत माध्यम के रुप में उभर कर हमारे समक्ष उपस्थित हुए है।

अहिंसात्मकता :– अहिंसात्मकता का अर्थ सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनो रुपो में अभिव्यक्त किया जाता हैं लेकिन व्यापक अर्थ में वह व्यक्ति में अन्तर्निहित उस भावना से है जिसके द्वारा मन, वाणी और कर्म से किसी व्यक्ति एवं समूह को हानि नहीं पहुँचाता है, हिंसा नहीं करता है।

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो में सामाजिक परिपक्वता एवं अहिंसात्मक के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन करना है।

1) माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो की सामाजिक परिपक्वता स्तर का अध्ययन करना।
2) माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो की अहिंसात्मकता स्तर का अध्ययन करना।
3) माध्यमिक स्तर के छात्र एवं छात्राओं की सामाजिक परिपक्वता का अध्ययन करना।
4) माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थी की सामाजिक परिपक्वता का अध्ययन करना।

5) माध्यमिक स्तर के हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थी कि सामाजिक परिपक्वता का अध्ययन करना।
6) माध्यमिक स्तर के छात्र छात्राओं की अहिंसात्मकता का अध्ययन करना।
7) माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियो की अहिंसात्मकता का अध्ययन करना।
8) माध्यमिक स्तर के हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियो की अहिंसात्मकता का अध्ययन करना।
9) माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो की सामाजिक परिपक्वता एवं अहिंसात्मकता के मध्य सह सम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएं :–

1) माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो की सामाजिक परिपक्वता स्तर में सार्थक अन्तर नहीं।
2) माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो में अहिंसात्मकता स्तर में सार्थक अन्तर नहीं है।
3) माध्यमिक स्तर के छात्र एवं छात्राओं की सामाजिक परिपक्वता में सार्थक अन्तर नहीं है।
4) माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है।
5) माध्यमिक स्तर के हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है।
6) माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओं की अहिंसात्मक में सार्थक अन्तर नहीं है।
7) माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अहिंसात्मकता के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है।
8) माध्यमिक स्तर के हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियो की अहिंसात्मकता में सार्थक अन्तर नहीं है।
9) माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में सामाजिक परिपक्वता एवं अहिंसात्मक में सार्थक सहसम्बन्ध नहीं है।

शोधकार्य के दौरान प्रस्तावित प्रद्धति :–

अनुसंधान विधि :– इस अनुसंधान में सर्वेक्षण विधि का किया गया है।

जनसंख्या :– प्रस्तुत भोध अध्यन में मऊ जिले के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थीयों का चयन किया गया।

प्रतिदर्श का चयन द्वि स्तरीय गुच्छ प्रतिचयन विधि द्वारा किया गया है। जिसमें मऊ जिले के माध्यमिक स्तर के 434 में 15 विद्यालयों से 150 विद्यार्थियों का चयन प्रतिदर्श हेतु किया गया।

क्षेत्र और परिसीमा :– शोध अध्ययन के उद्देश्य की पूर्ति के लिए मऊ जनपद के उत्तर प्रदेश बोर्ड के माध्यमिक विद्यालय के 150 हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थीयों का चयन किया गया है। जिनके द्वारा मऊ जनपद के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में सामाजिक परिपक्वता एवं अहिसात्मकता के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन किया जा सके।

उपकरण :– प्रस्तुत आकड़ों के संकलन के लिए (1) राव सोशल मेच्योरिटी स्केल एवं डा. वार्ड के नागले द्वारा निर्मित नान – वाइलेन्ट एटीट्यूट स्केल मापनी का चयन किया गया है।

सांख्यिकीय का विधि :– सांख्यिकी किसी भी अनुसंधान का वास्तविक आधार होता है जिससे परिकल्पनाओं के परीक्षण हेतु प्राप्त आकड़ो का विश्लेषण किया जाता है इसलिए आव यक है कि जैसे मध्यमान, टेस्ट, पीयरसन सहसम्बन्ध गुणाक, मानकविचलन आदि का प्रयोग शोधकर्ता द्वारा किया गया है।

तालिका निष्कर्ष एवं व्याख्या :–

सारणी सं० एक माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो की सामाजिक

सामाजिक पं० पर प्राप्तांक	विद्यार्थियों की सं०	विद्यार्थियों की संख्या प्रतिशत में	सामाजिक परिपक्वता स्तर
264 से अधिक	8	5.33%	औसत से अधिक
194. 264 के बीच	127	84.67%	औसत
194 से कम	15	10%	औसत से कम

सारणी संख्या 1 से स्पष्ट है कि 5.33% माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी की सामाजिक परिपक्वता औसत से अधिक है, 84.67% माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता औसत स्तर की है

तथा 10% माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो सामाजिक परिपक्वता औसत से कम है। अतः हम कह सकते है। कि अधिकांश माध्यमिक विद्यार्थियो की सामाजिक परिपक्वता औसत स्तर की है।

तालिका संख्या 2 माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की अहिंसात्मकता स्तर

अहिंसात्मकता पर प्राप्तांक	विद्यार्थियों की संख्या	विद्यार्थियों की संख्या प्रतिशत में	अहिंसात्मकता स्तर
286 से अधिक	3	2%	औसत से अधिक
219 – 286	127	81.333	औसत
219 से कम	15	10%	औसत से कम

सारणी संख्या 2 से स्पष्ट है कि 2% माध्यमिक स्तर की विद्यार्थियों की अहिंसात्मकता औसत से अधिक है। 81.33 माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की अहिसात्मकता औसत स्तर की है तथा 10% माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की अहिंसात्मकता औसत से कम है अतः हम कह सकते है कि अधिकांश माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो 81.33% की अहिंसात्मकता का औसत स्तर की है।

सारणी संख्या 3 माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओं की सामाजिक परिपक्वता का मध्यमान, मानक विचलन एवं 'टी' मान

विद्यार्थियों का समूह	N	M	't' मान	सार्थकता स्तर (0.05)
छात्रा	116	22.241	.842	सार्थक नहीं
छात्र	34	32.961		

सारणी संख्या 3 से स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओं की सामाजिक परिपक्वता प्राप्तांकों पर प्राप्त परिगणित t टी मान) .842(सारणी मान (1.96) से (0.05) सार्थकता स्तर पर कम है। अतः छात्र और छात्राओं की सामाजिक परिपक्वता के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है। इसलिए शून्य परिकल्पना 'माध्यमिक स्तर के छात्र एवं छात्राओं की सामाजिक परिपक्वता में सार्थक अन्तर नहीं है' स्वीकार की जाती है। अतः हम कह सकते हैं कि माध्यमिक स्तरो के छात्र और छात्राओं की सामाजिक परिपक्वता समान है।

सारणी 4 माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियो की सामाजिक परिपक्वता का मध्यमान, मानक विचलन एवं T मान

विद्यार्थी	N	M	S D	't' मान	सार्थकता स्तर
शहरी	29	222.90	16.973	.574	सार्थक नहीं
ग्रामीण	121	220.68	25.755		

सारणी संख्या चार से स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता प्राप्तांकों के परिणित t मान (574) सारणी मान (1.96) से (0.05) सार्थकता स्तर पर कम है। ग्रामीण और शहरी विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है इसलिए शून्य परिकल्पना 'माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है' स्वीकार की जाती है। अतः हम कह सकते हैं कि माध्यमिक स्तर के भाहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता समान है।

सारणी संख्या 5 माध्यमिक स्तर के हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता का मध्यमान, मानक विचलन एवं t मान

विद्यार्थी समूह	N	M	S.D	t मान	सार्थकता स्तर
हिन्दू	128	22.91	24.093	0.356	सार्थक नहीं
मुस्लिम	22	2.6. 45	25.356		

सारणी संख्या 5 से स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर के हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता के प्राप्तांको पर प्राप्त परिगणित t मान (.356) सारणी मान 1.96 से 0.05 सार्थकता स्तर पर कम है। इसलिए शून्य परिकल्पना 'माध्यमिक स्तर के हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है' स्वीकार की जाती है। अतः हम कह सकते हैं कि माध्यमिक स्तर पर हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता समान है।

सारणी 6 माध्यमिक स्तर के छात्र–छात्राओ की अहिंसात्मकता का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी मान

विद्यार्थी समूह	N	M	S D	t मान	सार्थकता स्तर
छात्रा	116	234.34	21.436	.631	सार्थक नहीं
छात्र	34	237.96	39.491		

सारणी संख्या 6 से स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर के छात्र छात्राओं की अहिंसात्मकता के प्राप्तांको पर प्राप्त परिगणित t मान (.631) सारणी मान (1.96) से 0.05 सार्यकता स्तर पर कम है। अतः छात्र छात्राओं की अहिंसात्मकता के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है। इसलिए शून्य परिकल्पना 'माध्यमिक स्तर के छात्र छात्राओं की अहिंसात्मकता में सार्थक अन्तर नहीं है' स्वीकार की जाती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि माध्यमिक स्तर पर छात्र एवं छात्राओं की अहिंसात्मकता समान है।

सारणी स. 7 माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अहिंसात्मकता का मध्यमान, मानक विचलन एवं 'टी' मान

विद्यार्थी समूह	N	M	S D	't' मान	सार्थकता स्तर
शहरी	29	234.90	15.844	.944	सार्थकता नहीं
ग्रामीण	121	235.17	28.517		

सारणी संख्या 7 से स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर के शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियो की अहिंसात्मकता के प्राप्ताकों पर प्राप्त परिगणित 't' मान (.944) सारणी मान (1.96) से 0.05 सार्थकता स्तर पर कम है। अतः शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियो की अहिंसात्मकता के मध्य सार्थक अंतर नहीं है। इसलिए शून्य परिकल्पना 'माध्यमिक स्तर शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियों की अहिसात्मकता के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है' स्वीकार की जाती है। अतः हम कह सकते हैं कि माध्यमिक स्तर पर शहरी एवं ग्रामीण विद्यार्थियो की अहिंसात्मकता समान है।

सारणी संख्या 8 माध्यमिक स्तर के हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियो की अहिंसात्मकता का मध्यमान, मानक विचलन एवं टी मान

विद्यार्थी समूह	N	M	S D	't'	सार्थकता स्तर
हिन्दू	128	22.91	24.093	.356	सार्थक नहीं
मुस्लिम	22	216.45	25.352		

सारणी संख्या 8 से स्पष्ट है कि माध्यमिक स्तर के हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियो की अहिंसात्मकता के प्राप्ताको पर प्राप्त परिगणित 't' मान .365 सारणी मान (1.96) से (0.05) सार्थकता स्तर पर कम है। अतः हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियों की अहिसांत्मकता के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है। इसलिए शून्य परिकल्पना 'माध्यमिक स्तर के हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियों के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है' स्वीकार की जाती है। अतः हम कह सकते है कि माध्यमिक स्तर पर हिन्दू एवं मुस्लिम विद्यार्थियो की अहिंसात्मकता समान है।

सारणी संख्या 9 माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता एवं अहिंसात्मकता के मध्य सह सम्बन्ध

चर	विद्यार्थियो की संख्या	पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक
सामाजिक परिपक्वता	150	r= .417
अहिसात्मकता	150	

सारणी 8 से स्पष्ट है कि विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता तथा अहिसांत्मकता के मध्य सह सम्बन्ध गुणांक .417 है जो कि dF = 148 के लिए .05 सार्थकता स्तर पर सारणी मान .159 से अधिक है। अतः दोनों चरों के मध्य सहसम्बन्ध सार्थक है अर्थात हम कह सकते हैं कि माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियो में सामाजिक स्तर बढ़ने पर या घटने पर उनकी अहिंसात्मकता स्तर क्रमशः बढ़ता या घटता है।

निष्कर्ष :– प्रस्तुत अध्ययन में यह पाया गया कि माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियो की उनके लिंग, धर्म तथा आवासीय परिवेश के सन्दर्भ में सामाजिक परिपक्वता एवं अहिंसात्मकता समान है तथा दोनों चरों के मध्य सहसम्बन्ध सार्थक है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1) आस्थाना एवं आस्थाना (2005) "मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्याकन", पुस्तक मन्दिर आगरा
2) गुप्ता, एस0 पी0 (2011) अनुसंधान सदर्शिका, सम्पत्य, कार्यविधि एवं प्रविधि शारदा पुस्तक भवन युनिवर्सिटी रोड इलाहाबाद
3) गैरेट, हेनरी ई, (1987), शिक्षा मनोवज्ञान में साक्रिय किया कल्याणी पब्लिशर्स, लुधियाना
4) पाण्डेय, शकुन्तला (1944), "विद्यालयो में नैतिक शिक्षा की प्रेरक विधाए" राजस्थान प्रकाशन जयपुर
5) सिंह, अरुण कुमार, (2014) "मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधिया, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी 221001

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

उपनिषद एवं महात्मा गाँधी

डॉ. जितेन्द्र शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि., चित्रकूट सतना (म. प्र.)

आलेख सार :– ऋषियों, मुनियों की अन्तर्दृष्टि प्रसूत तत्वज्ञान महात्मा गाँधी के रूप में विग्रहवान हो गया, जिसकी सहज अभिव्यक्ति बापू के वैयक्तिक और साामजिक जीवन में हुई। अहिंसा और सत्य का जीवन की प्रत्येक परिस्थितियों और घटनाओं में प्रयोग कर इस महामानव ने यह सिद्ध कर दिया गया कि उपनिषद और गीता के उपदेश जीवन के शाश्वत सत्य का ही उद्घाटन करते है। गाँधी ने दार्शनिक जगत में आखें खोली तो उन्हें माँ के रूप में गीता का प्यार मिला और ज्ञान के रूप में औपनिषद तत्वज्ञान। हाँ इतना जरूर है, देश काल और परिस्थिति के अनुसार बापू ने औपनिषदिक ज्ञान का अपने जीवन में प्रयोग किया। उसे नयी परिभाषा और नयी एप्रोच प्रदान किया। यही कारण है 'ईसावास्यमिदं सर्व यत्किंच जगत्यां जगत' का दिव्य औपनिषद संदेश, सर्वोदय के माध्यम से दरिद्रनारायणसेवामहे के रूप में मुखरित हो गया। 'तेन त्यक्तेनभुंजीथा' का मन्त्र वैयक्तिक साधना के रूप में गाँधी को एकवस्त्र धारणा करने के लिये विवश कर दिया। गाँधी के सार्वजनिक जीवन में यह मन्त्र अपरिग्रह और आवश्यकताओं को कम करने के दर्शन के रूप में अद्यापि मानव मात्र को प्रेरित कर रहा है। ट्रस्टीशिप सिद्धांत के रूप में 'परोपकाराय सतां विभूतयः' की मूल भावना मानव सभ्यता को 'दूसरों को खाकर जिओ' से 'जिओ और जीने दो' और उससे भी आगे बढ़कर दूसरों के लिये जिओ' का संदेश दे रही है।

Earn as much as you wish without sacrificing truth but spend on yourself as if you had nothing of your own." Earn your crores by all means but understand that your wealth is not yours, it belongs to the people". ..... का गाँधीवादी अभिमत औपनिषद तत्वज्ञान का गाँधीवादी संस्करण है।

वर्तमान सामाजिक जीवन में जहाँ एक ओर यह स्वीकार किया जाता है कि मानवीय मूल्यों का ह्रास हुआ है वहीं दूसरी ओर अधिकांश मानव के जीवन में चिंता, भय, नैराश्य, संकल्पहीनता, राग–द्वेष, वैमनस्य आत्मनिष्ठता और अकेलापन आदि व्याप्त है। वस्तुतः आज विश्व में शांति, प्रेम, सौहार्द्र, निष्कामता और निर्श्चितता के स्थान पर संदेह घृणा, कटुता, उत्पीड़न, ईर्ष्या और अनिश्चितता से समस्त सामाजिक वातावरण गुंफित है। आज हमारे सांस्कृतिक मूल्य चाहे वे दर्शन, कला, धर्म और साहित्य से सम्बन्धित हों एक अभूतपूर्व पैमाने पर सस्ते, संकीर्ण और व्यावसायिक बनते जा रहे हैं। आज मानव का सामाजिक जीवन संभवतः आदर्शहीन और सुविधा भोगी बन गया है। वस्तुतः सम्प्रति मानव जाति एक विकासोन्मुख संकट से गुजर रही है। ऐसे समय मे यह आवश्यक हो गया है कि ऐसा कोई उपाय खोज निकाला जाय, जिससे पथभ्रष्ट मनुजता के योगक्षेम की सिद्धि की जा सके। यद्यपि समय–समय पर अनेक विद्वानों, समाज सुधारकों और धर्म गुरुओं एवं चिंतकों के निरन्तर प्रयासों से इसमें कमी आयी है, परन्तु इतने प्रभावी प्रयत्न के बावजूद विनाश की एक अन्धी प्रेरणा से मानव जाति अद्यापि शासित हो रही है। परिणामतः बौद्धिक अहंकार, नैतिक पतन एवं भावनात्मक संकीर्णता आदि में वृद्धि हुई है। इससे मनुष्य–मनुष्य के बीच की दूरी बढ़ी है और मानवता अपंग हुई है। हमें इसके मूलकारणों की खोज करनी पड़ेगी। जीवन के इस अंधकार को दूर करने हेतु दार्शनिक प्रकाश का सहारा लेना उचित होगा, क्योंकि दर्शन जीवन में अनुभवों को समझने एवं उसके आलोक में जीवन की दिशा निर्धारित करने का प्रयत्न है।

आइये, बदलते सामाजिक प्रतिमानों की इसी पृष्ठभूमि में उपनिषद और महात्मा गांधी विषय पर गवेषणात्मक दृष्टि डालें। वेद, उपनिषद और गीता भारतीय, दर्शन, धर्म और संस्कृति के न केवल आधार स्तम्भ है, बल्कि ये मानव मात्र के आचार शास्त्र है, पथप्रदर्शक है सत्य के उद्घाटक है। विश्व के योगक्षेम को धारण करने वाले हैं। ऋषियों ने साधना की उच्चतम कक्षा में आरूढ़ होकर जिस परम सत्य का साक्षात्कार किया था वेद, उपनिषद, और गीता उसी परम सत्य की दार्शनिक अभिव्यक्ति है। महात्मा गांधी इसी आर्ष अभिव्यक्ति के नये भाष्यकार है। तभी तो बापू को वाद या सम्प्रदाय प्रवर्तक के रूप में महावीर स्वामी, बुद्ध या शंकराचार्य की भांति दार्शनिक नहीं माना जा सकता है। इस सत्य को स्वीकार करते हुये बापू ने स्वयं कहा है ''मैं दुनिया को कोई नयी चीज बताने नहीं आया हूँ। सत्य और अहिंसा अनादि काल से चले आये हैं।'' जीवन का चाहे पारिवारिक पहलू हो, सामाजिक,

धार्मिक और राजनीतिक ही क्यों न हो गाँधी की जीवन यात्रा, सत्य की खुली किताब है। सत्यमेव जयते, अहिंसा परमो धर्मः, मात्र धर्मग्रन्थों में निहित रहने वाला विषय नहीं हैं। यह मात्र वैयक्तिक साधना तक का भी विषय नहीं है बल्कि यह विश्व धर्म और विश्व राजनीति का आधार तत्व है। जिस धर्म और जिस राजनीति की स्थापना सत्य और अहिंसा की बुनियाद पर नहीं होगी ऐसी संस्कृति, धर्म और राजनीति अल्पजीवी होकर शीघ्र ही पतन के गम्भीर गह्वर में समा जायेगी। यही तो शिक्षा मिलती है बापू के जीवन दर्शन से। वस्तुतः गाँधी दर्शन सिद्धांतों का संग्रह नहीं बल्कि औपनिषद सत्य के अनुभूति की प्रयोगशाला है और उनका जीवन इस प्रयोगशाला में प्राप्त निष्कर्षों की पार्थिव अभिव्यक्ति है। डॉ. पट्टाभिसीतारमैय्या ने ठीक ही कहा है–''गांधीवाद सिद्धांतों वादों, नियमों और आदर्शों का संग्रह नहीं वरन जीवनयापन की एक शैली या जीवन दर्शन है। यह एक नयी दिशा की ओर संकेत करता है अथवा जीवन की अर्वाचीन समस्याओं के लिये एक प्राचीन समाधान प्रस्तुत करता है। गाँधी का समाज दर्शन, अर्थ दर्शन, औपनिषद नैतिक साम्यवाद का आधुनिक संस्करण है। साररूप में हम कह सकते हैं कि गांधी का सम्पूर्ण दर्शन, ईसावास्यउपनिषद के प्रथम श्लोक का विस्तार है, अनुशीलन एवं अनुसंधान है।

प्रसंगवशात ईसावास्यउपनिषद के प्रथम श्लोक का निरूपण प्रस्तुत है–ईशावास्यमिदं सर्व यत्किंच जगत्यां जगत्। तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्।[1]

मनुष्यों के प्रति वेद भगवान का पवित्र आदेश है कि आखिल विश्व ब्रम्हाण्ड में जो कुछ भी यह चराचर जगत तुम्हारे देखने–सुनने में आ रहा है सब का सब सर्वाधार, सर्वनियन्ता, सर्वशक्तिमान् सर्वज्ञ, सर्वकल्याणगुण स्वरूप परमेश्वर से व्याप्त है। सदा सर्वत्र उन्हीं से परिपूर्ण है। यों समझकर उन ईश्वर को निरन्तर अपने साथ रखते हुये सदा सर्वदा उनका स्मरण करते हुये ही तुम इस जगत में ममता और आसक्ति का त्याग करके केवल कर्तव्य पालन के लिये ही विषयों का यथाविधि उपभोग करो–अर्थात् विश्वरूप ईश्वर की पूजा के लिये ही कर्मों का आचरण करो। विषयों में मन को मत फँसने दो। इसी में तुम्हारा निश्चित कल्याण है। वस्तुतः ये भोग्य पदार्थ किसी के भी नहीं है। मनुष्य भूल से ही इनमें ममता और आसक्ति कर बैठता है। ये सब परमेश्वर के हैं और उन्हीं की प्रसन्नता के लिये इनका उपयोग होना चाहिये।

ईसावास्य उपनिषद के इस तत्वज्ञान के ताने–बाने में नये भारत का निर्माण कैसे किया जा सकता है? स्वयं बापू द्वारा प्रस्तुत 'मेरे सपनों का भारत' की कुछ पंक्तियाँ–मैं ऐसे भारत के लिये कोशिश करूंगा, जिसमें गरीब से गरीब लोग यह महसूस करेंगे कि वह उनका देश है जिसके निर्माण में उनकी आवाज का महत्व है। मैं ऐसे भारत के लिये कोशिश करूंगा जिसमें ऊँच और नीच वर्गों का भेद नहीं होगा और जिसमें विविध सम्प्रदायों में पूरा मेलजोल होगा। ऐसे भारत में अस्पृश्यता के या शराब के या दूसरी नशीली चीजों के अभिशाप के लिये कोई स्थान नहीं हो सकता। उनमें स्त्रियों को वही अधिकार होंगे जो पुरुषों को। चूँकि शेष सारी दुनिया के साथ हमारा सम्बन्ध शांति का होगा, यानी न तो हम किसी का शोषण करेंगे और न किसी के द्वारा अपना शोषण होने देंगे। ऐसे सब हितों का, जिनका करोड़ों मूक लोगों के हितों से कोई विरोध नहीं है, पूरा सम्मान किया जायेगा, फिर वे देशी हो या विदेशी, अपने लिये तो मैं यह भी कह सकता हूँ कि मैं देशी और विदेशी के फर्क से नफरत करता हूँ। यह है मेरे सपनों का भारत इससे भिन्न किसी चीज से मुझे संतोष नहीं होगा।

यदि भारत ने हिंसा को अपना धर्म स्वीकार कर लिया और यदि उस समय मैं जीवित रहा, तो मैं भारत में नहीं रहना चाहूँगा। तब वह मेरे मन में सर्व की भावना उत्पन्न नहीं करेगा। मेरा देशप्रेम मेरे धर्म द्वारा नियन्त्रित है। मैं भारत से उसी तरह बँधा हुआ हूँ, जिस तरह कोई बालक अपनी माँ की छाती से चिपटा रहता है। क्योंकि मैं महसूस करता हूँ कि वह मुझे मेरा आवश्यक आध्यात्मिक पोषण देता है। उसके वातावरण से मुझे अपनी उच्चतम आकांक्षों की पुकार का उत्तर मिलता है। यदि किसी कारण मेरा यह विश्वास हिल जाय या चला जाय तो मेरी दशा उस अनाथ के जैसे होगी, जिसे अपना पालक पाने की आशा ही न रही हो।''[2]

वस्तुतः गांधी का प्रत्येक सिद्धांत चाहे उनका सामाजिक दर्शन हो अथवा आर्थिक दर्शन, पर्यावरणीय दर्शन हो या राजनीतिक प्रत्येक के माध्यम से उन्होंने सत्य और अहिंसा का प्रयोग कर परम सत्य ईश्वर का साक्षात्कार किया है। कि बहुना, ईशावास्य उपनिषद के उक्त श्लोक की प्रत्यक्षर निष्पत्ति गांधी द्वारा व्याख्यायित और वैयक्तिक जीवन में सेवित अहिंसा, सत्य और अपरिग्रह के दर्शन में दृष्टिगत होती है। 'ईशावास्यमिदं सर्व' चराचर जगत परम सत्ता ईश्वर के प्रकाश से प्रकाशित है। ईश्वर जगत के कण–कण में

व्याप्त है। उपनिषद के इस मन्त्र की, तत्वज्ञान की व्यावहारिक परिणति गाँधी की ईश्वर विषयक् अवधारणा और अहिंसा के व्यापक प्रयोग में दृष्टिगत होती है। इस सम्बन्ध में गाँधी जी के विचारों को स्पष्ट करते हुये एन. के.बोस कहते हैं ''ईश्वर आकाश में निवास करने वाली शक्ति नहीं है। ईश्वर हम सब में निवास करने वाली अदृश्य शक्ति है और नाखून मांस के जितना निकट है वह हमारे उससे भी अधिक निकट है।..... ईश्वर हममें से प्रत्येक में है। अतः हमें निरपवाद रूप से प्रत्येक मानव से तादात्म्य स्थापित करना चाहिये। पुरानी भाषा में इसे आंतरिक सहयोग या आकर्षण कहते हैं। बोलचाल की भाषा में इस प्रेम कहा जाता है।[3]

ऐसे ईश्वर को उन्होंने कभी–कभी 'परम सत्य' और कभी 'राम' की संज्ञा दी है। कुछ आलोचक यहाँ राम से तात्पर्य अयोध्या नरेश राम लेते हुये महात्मा गाँधी पर हिन्दूवादी होने का आरोप लगाते हैं। वस्तुतः आलोचकों का यह आरोप निराधार है। उनके राम दशरथ पुत्र राम न होते हुये अखण्ड, अनन्त, अविनाशी ब्रम्ह है। ''मेरे राम, हमारी प्रार्थनाओं के राम अयोध्या नरेश के पुत्र ऐतिहासिक राम नहीं है वे शाश्वत अजन्मा अद्वितीय है। केवल उन्हीं की मैं पूजा करता हूँ।''[4]

To me God is truth and love. God is ethics and morality god is fearlessness, god is the source of height and life and yet he is above and beyond all these." (CWMG : 26:2247)[5] God is neither in heaven nor down below but in everyone".

ऐसे घट–घट व्यापी राम को राम, रहीम, खुदा, गाड, अल्लाह आदि किसी भी संज्ञा से संज्ञापित किया जा सकता है। परम सत्ता की सर्वव्यापकता की अनुभूति गांधी को धर्म के पीछे छुपी नैतिकता में भी दृष्टिगत होती है।

Religions practices and domes may differ, but the principles of ethics must be the same in all religions. I therefore advice all readers to think of ethics [CWMG : 10:2][6].

गाँधी जी का चाहे सामाजिक दर्शन हो अथवा आर्थिक दर्शन, पर्यावरणीय दर्शन हो या राजनीतिक प्रत्येक के माध्यम से उन्होंने सत्य और अहिंसा का प्रयोग कर परम सत्य ईश्वर का साक्षात्कार किया है। गाँधी का अहिंसा सिद्धांत 'ईशावास्यमिदं सर्वं' मन्त्र का व्यावहारिक प्रतिफल है। औपनिषद तत्वमीमांसा का गांधीवादी संस्करण है। वापू अहिंसा को दो अर्थों में स्वीकार करते हैं–1. अभावात्मक अहिंसा, 2. भावात्मक अहिंसा।

जीवों की हिंसा न करना, उनका बध न करना अभावात्मक अहिंसा है। प्रायः हमारे कार्य त्रिविध प्रकार से सम्पादित होते हैं–मनसा, वाचा, कर्मणा। इस तथ्य को दृष्टिगत रखते हुये कहा जा सकता है कि किसी भी प्राणी को मन, वाणी और कर्म से किसी भी प्रकार का कष्ट न पहुँचाना ही अहिंसा है। इस नियम का प्रत्यक्षतः और परोक्षतः दोनों ही स्थितियों में पालन किया जाना चाहिये।

Ahimsa without action is impossibility. Action does not mearly mean activity of hands and feet. The mind performs greater activity than even hands and feet. Every thought is an action. [CWMG 40:192][7].

भावात्मक अर्थ में अहिंसा बड़े व्यापक रूप में हमारे सामने उपस्थित होती है। प्रेम, करुणा, उदारता सहिष्णुता, क्षमा और विनम्रता का व्यवहार ही अहिंसा है। समस्त नैतिक सद्गुणों को व्यवहार में उतारना अहिंसा का भावात्मक अर्थ है। इस रूप में अहिंसा ''मातृवत परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्' और 'अयं निजः परोवेति, गणना लघुचेतषां, उदारचरितानां तु बसुधैव कुटुम्बकम्' का नैतिक आदर्श ग्रहण कर लेती है।

A man who is full of love never fargets that the word is full of life like his and takes great care that he does not horm any living thing. He seeks his love reflected in the eyes of those whom he meets. H is the friend of all. As a cat holds her kittens between her teeth without hearting them so does a man of love deal with all with whom he comes in contact He walks gently and noiselessly test his foot steps may disturb the sleep of others. He always makes room for those who need it. [CWMG 56:208].

इस प्रकार अहिंसा व्यापक प्रेम के रूप में, ईश्वरीय प्रेरणा के रूप में प्राणिमात्र को अपने बाहुपाश में बांध लेती है।

There is not a single person in the whole word who does not deserve our love [CWMG 59:296] नित्य अहिंसक व्यक्ति के श्वास–प्रश्वास में ईश्वास्य मिदंसर्व का मन्त्र प्रतिपल रूपायित होता रहता है। हिन्दी नवजीवन के 20 सितम्बर 1928 के अंक में बापू अहिंसा की व्यापक अवधारणा को निम्न शब्दों में स्पष्ट करते हैं–अहिंसा का अर्थ है, प्रेम का समुद्र, वैरभाव का सर्वथा त्याग, अहिंसा में दीनता भीरूता न हो डरकर भागना भी न हो अहिंसा में दृढ़ता, वीरता, निश्छलता होनी चाहिये।

ईश उपनिषद के 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा' का मन्त्र 'अपरिग्रह' के रूप में बापू के व्यक्तिगत जीवन में और 'ट्रस्टीशिप' सिद्धांत के रूप में सामाजिक जीवन में रूपायित होता है। आवश्यकता से अधिक धन का संग्रह न करना ही अपरिग्रह है। यहाँ पर उल्लेखनीय है कि आवश्यकतायें अनंत होती हैं। ऐसी स्थिति में आवश्यकता से अधिक धन की सीमा रेखा कैसे सुनिश्चित की जा सकती है। इसके साथ ही व्यक्ति की सामाजिक और भौगोलिक स्थिति के अनुसार आवश्यकतायें पृथक्–पृथक् होती है। एक ही वस्तु एक व्यक्ति के लिये अनिवार्य आवश्यकता हो सकती है तो दूसरे के लिये विलासिता। ऐसी स्थिति में आवश्यकता से अधिक धन को सुनिश्चित कर पाना टेढी खीर है। इस सम्बन्ध में गांधी जी का मत प्राचीन भारतीय नैतिक सिद्धांत से मिलता जुलता है। यह है ''आवश्यकताओं को कम करने का दर्शन'' अपरिग्रह व्रत का पालन करते समय हमें अपनी कामनाओं (आवश्यकताओं) को ही सीमित कर लेना चाहिये। 'संतोषं परमंधनम्' के सिद्धांत को जीवन में उतारना चाहिये। हम अपनी आवश्यकताओं को जितना सीमित करते जायेंगे, प्रकृति (भगवान) के उतना ही नजदीक होते जायेंगे। 'मेरे सपनों का भारत' में गाँधीजी कहते हैं ''एक हद तक शारीरिक सुविधा और आराम का होना जरूरी है लेकिन उस हद से आगे बढ़ने पर ये सुविधायें और आराम सहायक बनने के बजाय हमारी आध्यात्मिक उन्नति में बाधक बन जाते हैं। इसलिये बेहद जरूरतें बढ़ाने और उन्हें पूरा करने का आदर्श निराभ्रम और जाल ही है। मनुष्य की शारीरिक जरूरतें पूरी करने का यहाँ तक कि उसकी संकुचित बौद्धिक जरूरतें पूरी करने का भी अमुक हद के बाद अंत आना चाहिये, क्योंकि इस मर्यादा को लांधने पर वह प्रयत्न शारीरिक और बौद्धिक विलास का रूप से लेता है। मनुष्य को अपने शारीरिक सुखों और सांस्कृतिक सुविधाओं की ऐसे ढंग से व्यवस्था करनी चाहिये कि वे उसकी मानव सेवा में बाधक न बने। मनुष्य की सारी शक्तियों का उपयोग मानव सेवा में ही होना चाहिये।[8]

The right use of money is to spend it for the country, of you spend money for the country it is found to yield fruits.[9]

सच्ची सभ्यता का लक्षण परिग्रह बढ़ाना नहीं है बल्कि सोच–समझकर अपनी इच्छा से उसे कम करना है। ज्यों–ज्यों हम परिग्रह घटाते जाते हैं, त्यों–त्यों सच्चा सुख और सच्चा संतोष बढ़ता जाता है, सेवा की शक्ति बढ़ती जाती है। अभ्यास से आदत डालने से आदमी अपनी जरूरतें घटा सकता है और ज्यों–ज्यों उन्हें घटाया जाता है त्यों–त्यों वह सुखी, शांत और सब तरह से संतुष्ट होता चला जाता है।

सुनहला नियम तो यह है कि जो चीज लाखों लोगों को नहीं मिल सकती उसे लेने से हम भी दृढ़ता पूर्वक इन्कार कर दें। त्याग की यह शक्ति हमें कहीं से एकाएक नहीं मिल जायेगी पहले तो हमें ऐसी मनोवृत्ति पैदा करना चाहिये कि हमें उन सुख–सुविधाओं का उपयोग नहीं करना है जिनसे लाखों लोग वंचित है और उसके बाद तुरन्त ही अपनी इस मनोवृत्ति के अनुसार हमें शीघ्रतापूर्वक अपना जीवन बदलने में लग जाना चाहिये।[10]

मा गृधः कस्यस्विद् धनम्' की व्याख्या करते हुये बापू का मत है–'मनुष्य की वृत्तियाँ चंचल हैं। उसका शरीर जैसे–जैसे ज्यादा देते जाय वैसे–वैसे ज्यादा माँगता जाता है। ज्यादा लेकर भी वह सुखी नहीं होता। भोग भोगने से भोग की इच्छा बढ़ती जाती है। इसलिये हमारे पूर्वजों ने भोग की हद बाँधी दी।

अंत में उपनिषद सेवित अपने मत को ''मेरे सपनों का भारत' में सार रूप में अभिव्यक्ति देते हुये गांधी जी कहते हैं–''मैं इस राय के साथ निःसंकोच अपनी सम्मति जाहिर करता हूँ कि आमतौर पर धनवान केवल धनवान ही क्यों, बल्कि ज्यादातर लोग इस बात का विशेष विचार नहीं करते कि वे पैसा किस तरह कमाते हैं। अहिंसक उपाय का प्रयोग करते हुये यह विश्वास तो होना ही चाहिये कि कोई आदमी कितना ही पतित क्यों न हो यदि उसका इलाज कुशलता पूर्वक और सहानुभूति के साथ किया जाय तो उसे सुधारा जा सकता है। यदि समाज का हर एक सदस्य अपनी शक्तियों का उपयोग वैयक्तिक स्वार्थ साधने के लिये नहीं बल्कि सबके कल्याण के लिये करे तो क्या इससे

समाज की सुख–समृद्धि में वृद्धि नहीं होगी? हम ऐसी जड़ समानता का निर्माण नहीं करना चाहते जिसमें कोई आदमी योग्यताओं का पूरा–पूरा उपयोग कर ही न सके। ऐसा समाज अंत में नष्ट हुये बिना रह ही नहीं सकता। इसलिये मेरी यह सलाह बिल्कुल ठीक है कि धनवान लोग चाहे करोड़ों रुपये कमायें (वेशक, ईमानदारी से) लेकिन उनका उद्देश्य वह सारा पैसा सबके कल्याण में समर्पित कर देने का होना चाहिये 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा' (इस) मन्त्र में असाधारण ज्ञान भरा पड़ा है। मौजूदा जीवन पद्धति की जगह जिसमें हर एक आदमी पड़ोसी की परवाह किये बिना केवल अपने लिये ही जीता है, सर्वकल्याणकारी नयी जीवन पद्धति का विकास करना हो, तो उसका सबसे निश्चित मार्ग यही है।''[11]

संदर्भ :–

1. ईशावास्योपनिषद (अन्तर्गत ईशादि नौ उपनिषद् 1/1 गीताप्रेस गोरखपुर।
2. मो.क.गाँधी (1995) मेरे सपनों का भारत नवजीवन ट्रस्ट अहमदाबाद, पृ.सं.20–21
3. बोस एन.के., सलेक्शन्सफ्राम गाँधी, पृ.सं. 8
4. हरिजन, 28 अप्रैल, 1946
5. Mishra Anil Datta (2010) : Quotes of Mahatma Gandhi, Abhijeet Publications Delhi, pp.54
6. वही, पृ.सं.43
7. वही, पृ.सं.4
8. मो.क.गाँधी (1995) मेरे सपनों का भारत नवजीवन ट्रस्ट अहमदाबाद, पृ.सं.48
9. Mishra Anil Datta (2010) : Quotes of Mahatma Gandhi, Abhijeet Publications Delhi, pp.48
10. मो.क.गाँधी (1995) मेरे सपनों का भारत नवजीवन ट्रस्ट अहमदाबाद, पृ.सं.48–49
11. वही, पृ.सं.57

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

मध्य प्रदेश विधान सभा निर्वाचन – 2018 : एक राजनैतिक अध्ययन

कैलाश कुमार चन्द्रा
एम.ए., एम.फिल्, शोध छात्र, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर
डॉ. डी. के. सिंह
शोध निर्देशक – सहायक प्राध्यापक, के.आर.जी. शासकीय उत्कृष्ट महाविद्यालय, ग्वालियर

विश्व के अधिकांश देशो को देखा जाये तो यही स्पष्ट होता है कि लोकतंत्र या जनतंत्र ही जनता के शासन का आधार है। इस शासन प्रणाली के अन्तर्गत मानव के मूल्यों, मानव की गरिमा का सम्मान व्यक्ति की स्वतन्त्रता, समानता, न्याय एवं विधि के शासन पर आधारित व्यवस्थाओं का सम्मान करते हैं। लोकतंत्र प्रणाली में मतदान की अहम भूमिका है। मताधिकार का प्रयोग करने वाला प्रत्येक व्यक्ति अपना अमूल्यमत यही सोचकर देता है कि सरकार ऐसी बने जिससे देश का उत्थान हो, विकास को, हित हो एवं जनमानस का भविष्य सुरक्षित हो। लोकतंत्र शासन व्यवस्था में उत्तर दायित्व महत्वपूर्ण स्थान रखता है इसमें आम नागरिकों को राजनैतिक शिक्षा एवं शासन का ज्ञान प्राप्त होता है।

एक विद्वान ने कहा है– ''एक प्रबल एवं सफल लोकतंत्र के लिए यह अति आवश्यक है कि जनमानस शिक्षित, जागरूक, कर्त्तव्यपरायण हो साथ ही उसके अन्दर सामाजिक एवं सहयोग की भावना हो।''[1]

लोकतंत्र शासन व्यवस्था में उत्तर दायित्व महत्वपूर्ण स्थान रखता है इसमें आम नागरिकों को राजनैतिक शिक्षा एवं शासन का ज्ञान प्राप्त होता है। ''लोकतंत्र एक ऐसी जीवन पद्धति की खोज है जिसमें न्यूनतम् बल प्रयोग अथवा दबाव से व्यक्ति स्वतः प्रेरित स्वतंत्र बुद्धि तथा उसके कलाप का मेल बैठाया जा सके और यह विस्वास है कि ऐसी पद्धति समस्त मानव जाति के लिए आदर्श पद्धति होगी जो मनुष्य की प्रवृत्ति और विश्व की प्रकृति के साथ अधिकतम् सामंजस्य स्थापित करेगी''[2]

लेकिन इस समय शासन में बुराइयाँ भी दिखी है कि जनसंख्या प्रभाव का बल अधिक होने के कारण कई देशों में सत्ता अयोग्य व अशिक्षित लोगों के हाथों में चली जाती है विगत दिनों में धन बल का प्रभुत्व देखने को मिला है। ''व्यक्ति अपने वोटों को रूपयों से तौलते है, मत देने के लिए सौदा करता है। आज का मानव स्वार्थ की भावना से परिपूर्ण है तथा वह अपने लोकमत को अपने स्वार्थ के लिए प्रयुक्त करना चाहता है। लोकमत का क्षेत्र वर्तमान की अपेक्षा कठिन कार्य है फिर भी सरकार मंदान्ध व्यक्तियों के लोकमत पर विश्वास करती है। लोकमत की उपेक्षा से समाज एवं राष्ट्र में असन्तोष उत्पन्न होता है।''[3] विधानसभा चुनाव कई दृष्टियों से अनोखा है। परिणाम आने में इतना समय कभी नहीं लगा जितना 2018 में। निर्वाचन परिणाम के अवलोकन के पश्चात् यह स्पष्ट हुआ कि पहली बार कांग्रेस व भाजपा में किसी को पूर्ण स्पष्ट बहुमत नहीं मिला। परिणाम स्वरूप कांग्रेस निर्दलीय एवं अन्य घटक दल के सहयोग से पूर्ण बहुमत प्राप्त कर सकी।

मध्य प्रदेश विधान सभा झूलती हुई विधान सभा बनने से बाल–बाल बच गई। भाजपा बहुमत के पास आकर ठिठक गई और कांग्रेस अन्य विधायकों के कंधे पर हाथ रखकर पार हो गई लेकिन शिवराज चौहान की लोक कल्याणकारी योजनायें और कुछ अपने ही लोगों के अहम और असहयोग तो कुछ कांग्रेस की कर्ज माफी जैसी घोषडाओं की टीलो के नीचे दब गई। कांग्रेस–कमलनाथ सिंधिया के मैदानी और दिग्विजय सिंह विद्वान चाणक्य प्रयासों के सहारे, चुनावी नईया पार कर गई।

वर्तमान राजनीति में अब स्थायित्व नहीं रहा। समय के अनुसार राजनीति में विचारधारा का प्रभाव बहुत पड़ता है क्योंकि इस समय लोकतांत्रिक व्यवस्था आधुनिक युग की पहल कर रही है। प्रत्येक नागरिक को आशा होती है कि राज्य में पाँच वर्ष तक अपेक्षित शासन को अनवरत् चलते हुए देखेगा। सत्ता के रास्ते आये नवांगतुक पुरानी चुनौतियों का चक्रव्यूह भेदने का प्रयास करते है या प्रदेश के विकास को नई दिशा देने का बीड़ा उठाते है।

नोटबन्दी, जी0एस0टी0 और एट्रोसिटी एक्ट ने भाजपा के लिए इस चुनाव को आग का दरिया बनाया, जिसमें डूबकर पार होने की शर्त थी इस पुण्य कार्य की अग्नि सुरक्षा कवच को ओढने बावजूद वह झुलसे बिना नहीं रही। भीषण सत्ता विरोधी लहर में भी मध्य प्रदेश वैसा नहीं रहा। सभी चुनाव में भाजपा के मजबूत गढ

भी मध्य प्रदेश के सभी 16 नगर निगमों में भाजपा के महापौर है लेकिन विधान सभा चुनाव में छः नगर निगम क्षेत्र से कांग्रेस के प्रत्यासी जीते है। कांग्रेस की इस जीत ने भाजपा को हिला कर रख दिया है। परिणाम शहरी पृष्ठ भूमि वाली अन्य विधान सभा सीटों के भी रहे है। राजधानी भोपाल में मुकाबला बराबरी पर रहा।

आमतौर पर शहरी सीटों पर भाजपा को एक तरफा समर्थन मिलता रहा है 2003 से लगातार उसे शहरी वोट मिले है। नगरीय चुनाव में भी कांग्रेस का सूपडा साफ हो गया था। मध्यप्रदेश 250000 से भी ज्यादा आबादी वाले 16 नगरनिगम है। 2014 के बाद नगरीय निकाय चुनाव में इन सभी में भाजपा प्रत्याशी बडे अन्तर से जीत हासिल कर महापौर बने थे। इस विधान सभा में युवाओं के साथ अनुभवी विधायक ज्यादा नजर आयेगें ऐसा इसलिए है कि चुनाव जीतने वालों में पूर्व विधायकों की संख्या ज्यादा है जब कि नये–नये विधायकों की संख्या –32 इस बार 21 महिलायें भी जीती हैं, भाजपा–11, कांग्रेस–09, बसपा–01 महिला विधायक है।

इस बार विधानसभा चुनाव में हालात बदल गयें। नगरीय क्षेत्रों में भाजपा का सिक्का नहीं चल पाया व निगमों के साथ मिला मुख्यालय वाली, नगरपालिका परिषद् सीटों में भी कांग्रेस का प्रदर्शन सुधरा है। विधानसभा चुनाव में एक दर्जन राजनैतिक दलों को नोटा ने मात दे दी सर्वाधिक वोट हासिल करने वाली तीन राजनीतिक पार्टियों के बाद चौथे नम्बर पर रहा है। प्रदेश के कई राजनेताओं और बडे नेताओं की जितने वोटों से जीत हार हुई उससे ज्यादा वोट नोटा को मिले।

नोटा को सर्वाधिक वोट भैंसदेही (बैतूल) में मिले हैं, शाहपुर (डिण्डौरी) दूसरे नम्बर पर तथा तीसरे नम्बर पर जुन्नारदेव (छिंदवाडा) रहे है और भी सबसे कम 195 वोट नोटा को अटेर में मिले है लेकिन 2013 की तुलना में नोटा को कम वोट मिले। पिछले विधान सभा चुनावों में आदिवासी क्षेत्रों में नोटा का प्रयोग किया गया था। ''मध्य प्रदेश के 230 स्थानों में से 40.9 प्रतिशत मतों के साथ 114 स्थानों पर जीतकर कांग्रेस सबसे बडा राजनीतिक दल बना। भाजपा 41 प्रतिशत मत प्राप्त करके 109 स्थानों के साथ दूसरे स्थान पर रही। वही बसपा 5.8 प्रतिशत मतों के साथ 2 स्थान पर ही सीमित रही यद्यपि बसपा के छः प्रत्याशी निकटतम् प्रतिद्वंद्धी भी रहे। समाजवादी पार्टी 1.30 प्रतिशत मतों के साथ केवल एक स्थान पर विजयी हुई, लेकिन उनके पाँच प्रत्याशी निकटतम् रहे।''[4]

गोंडवाना गणतन्त्र पार्टी ने समाजवादी पार्टी से भी अधिक 1.77 प्रतिशत मत अर्जित किये लेकिन कहीं पर भी जीत दर्ज नहीं की और केवल दो स्थानों पर निकटतम् प्रतिद्वंदी रहे। ''इस हार के लिए जिन कारणों को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है वे है मौजूदा विधायकों मंत्रियों के खिलाफ माहौल का अनुमान न लगा पाना, राज्य में पेट्रोलियम उत्पादों की अपेक्षाकृत उच्चकीमत, युवाबेरोजगारी के मुद्दे को पर्याप्त रूप में संबोधित नहीं किया गया, उम्मीदवारों का गलत चयन, दुर्वल लोकप्रिय योजनायें, स्थानीय मशीनरी, अपर्याप्त वितरण तन्त्र के कारण कमजोर लचर शासन व्यवस्था। कार्यान्वयन और कुछ स्थानों पर बागियों, विघ्नकर्ताओं, पक्ष त्यागियों, भितरघातियों ने भी काम किया, जिन्होनें कुछ उम्मीदवारों की जीत की सम्भावनाओं को क्षीण कर दिया।''[5]

यह बहुत शान्त एवं लहर विहीन चुनाव था मतदाताओं की मनोदशा को समझना वास्तव में मुश्किल था यद्यपि अब तक एक ही सरकार के कारण मतदाताओं के बीच एक तरह का ऊवाऊपन था जिसने बदलाव के लिए वोट में योगदान दिया। ''पाँच विधान सभा चुनावों के परिणाम आ गये है और ये भाजपा के विपक्ष में गये है। इस चुनाव की आंधी में भाजपा देश के नक्शे से गायब होती दिखी, कांग्रेस को न केवल टिका दिया बल्कि उसे आगे की लडाई के लिए तार्किक आत्म विश्वास और एक जिम्मेदारी से भर दिया है। मतदाताओं का एक मुश्त तीन–तीन राज्यों – मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ, राजस्थान को कांग्रेस के हाथों में सौपनें के पीछे उनका पुख्ता भरोसा है। निश्चित ही इसके पीछे परिवर्तन कॉमी एंटी एन्कम्बेसी एक बडा फैक्टर है यह सरजमीं पर बदलाव के एक सामान्य सार्वकालिक सिद्धान्त की तरह काम करता है, जब एक पार्टी विशेष के प्रति व्यक्त की जाती रही जनाकांक्षाओं को सत्ता अपने प्रति एक गारन्टी मानकर जबावदेहियों से निष्क्रिय हो जाती है फिर विधान सभा चुनाव तो होते ही हैं। स्थानिक मुद्दों पर। इसलिए विधानसभा चुनाव के परिणाम सामान्यतः आम चुनाव के दिग्दर्शन नहीं हो सकते। या उसे ऐसा नहीं कह सकते। दे ाज अनुभवों का इतिहास यही बताता है तो इन विधानसभा चुनावों की सटीक व्याख्या हो सकती है कि भाजपा के इन क्षेत्रों की कार्यप्रणालियों से ऊबकर जनता ने विरोधी दलों को सत्ता सौंप दी।''[6]

एक मध्यप्रदेश है जहाँ भारी अनियमितताओं के नियमित आरोपों से घिरे रहने के बावजूद शिवराज सिंह चौहान ने कांग्रेस को अनुमान के विपरीत कॉटे की टक्कर दी। पार्टी मशीनरी का असर यह है कि मध्यप्रदेश में 15 वर्ष सत्ता में रहकर भी भाजपा मामूली अन्तर से चुनाव हारी।

संदर्भ सूची :–

1. सी.पी. शर्मा राजनीति के सिद्धान्त, रामप्रसाद एण्ड संस, आगरा 2009– पृ.सं.138
2. डॉ. अजय सिंह/विजय प्रताप मल्य– राजनीति के मूल सिद्धान्त, अग्रवाल पब्लिकेसंस आगरा– 2008 – पृ.सं.169
3. नरेन्द्र थेरी, नेतृत्व, सरकार एवं राजनीति (भारतीय संन्दर्भ) आर.बी.एस.ए. पब्लिकेसंस जयपुर 2003 पृ. सं.180
4. डॉ. यतीन्द्र सिंह सिसोदिया, निदेशक– एम.पी.एस. एस.आर., सम्पादकीय– राष्ट्रीय सहारा कानपुर (हस्तक्षेप) 19 जनवरी 2019, पृ.सं.3
5. डॉ. यतीन्द्र सिंह सिसोदिया, निदेशक– एम.पी.एस. एस.आर., सम्पादकीय– राष्ट्रीय सहारा कानपुर (हस्तक्षेप) 15 दिसम्बर 2018, पृ.सं.3
6. सम्पादकीय– परिणाम के निहितार्थ–राष्ट्रीय सहारा कानपुर–12 दिसम्बर 2018, पृ.सं.8

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

स्व–सहायता समूह के माध्यम से जनजातीय महिलाओं का सामाजिक–आर्थिक सशक्तिकरण मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले के विशेष संदर्भ में

सुनीता भवेल
पी एच. डी. शोधार्थी (समाजशास्त्र) डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान विश्वविद्यालय, डॉ. अम्बेडकर नगर, इन्दौर

प्रस्तावना :– महिलाओं की आर्थिक स्थिति को आजकल समाज की स्थिति के विकास के एक निर्धारक के रूप में स्वीकार किया जाता है, क्योंकि महिलाएँ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से आर्थिक क्रियाओं में योग देती है। वे समस्त पारिवारिक दायित्वों का बोझा स्वयं उठाकर पुरुषों को केवल आर्थिक क्रियाएँ संपादित करने को पूरा समय व अवसर प्रदान करती हैं तथा स्वयं भी पारिवारिक उत्तरदात्वियों का निर्वाह करने के साथ–साथ पुरुशों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर आर्थिक क्रियाओं में संलग्न होती है। आज भागीदारी की दृष्टि से कृषि, पशु–व्यवसाय, हैण्डलूम आदि में महिलाओं के अनुपात में काफी हद तक वुद्धि हुई है। यही नहीं पिछले दशक में महिलाओं की क्रियाओं से संबंधित नए आयाम उभरकर सामने आए हैं। अब वे इलेक्ट्रॉनिक, टेली कम्यूनिकेशन, उपभोक्ता उत्पादन, संगठित क्षेत्रों के उद्योगों, विधि संबंधी, चिकित्सा संबंधी, प्रशासनिक तथा अन्य महत्वपूर्ण व्यवसायों में भाग ले रही है। इतना ही नही स्व–रोजगार के उद्यम संचालित कर दूसरों के लिए भी आर्थिक आत्मनिर्भरता का मार्ग प्रशस्त कर रही है।

स्व–सहायता समूह की अवधारणा इसी पर निर्भर करती है कि गरीबों को संगठित करना तथा उन्हें स्वयं गरीबी उन्मूलन के लिये प्रयास करने हेतु प्रेरित करना। स्व–सहायता समूह एक समान सोच, पृष्ठभूमि तथा उद्देश्य वाले सदस्यों का छोटा समूह/संगठन है जो अपनी सामूहिक क्षमताओं से अपनी समस्याओं के निदान के लिये प्रयत्न ाील होते हैं। यह समूह सामाजिक–आर्थिक सकारात्मक परिवर्तन तथा सशक्तिकरण के मंच है जिनके माध्यम से असंगठित गरीब वर्ग संगठित होकर अपने सामाजिक आर्थिक विकास के उद्देश्य को प्राप्त करते है। चूँकि विकासशील/अविकसित समाज में अत्यधिक श्रम–शक्ति प्राथमिक सेक्टर कृषि व अन्य सम्बन्धित कार्य व सेवा क्षेत्र में संलग्न रहती है एवं ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है।

महिला स्व–सहायता समूह का परिचय :– महिला स्व–सहायता समूह एक गाँव में समान सामाजिक–आर्थिक स्थिति वाली 15–20 महिला सदस्यों द्वारा स्वेच्छा से गठित किया जाता है। इन समूहों की सदस्य संख्या कम से कम 10 और अधिक 20 हो सकती है। इन समूहों के सदस्य एक निश्चित राशि बचत करती है। जिसका अंशदान उत्पादक, अपभोग अथवा आपातकालीन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऋण के रूप में देने के लिये परस्पर सहायक होते हैं। इसके अंतर्गत समूह की प्रत्येक महिला सदस्य प्रतिदिन/प्रति सप्ताह/प्रतिमाह एक निश्चित बचत कर धन राशि को सप्ताह/माह में एक बार समीपस्थ बैंक में खाता खोलकर जमा करती है। प्रत्येक समूह की सर्वसम्मति से चुनी गई एक अध्यक्ष और एक सचिव नियुक्त होती है।

अध्यक्ष और सचिव ही समूह की जिम्मेदारी और बैंक के खाते को संचालित करती है। इनका कार्यकाल एक निश्चित समयावधि का होता है। समयावधि समाप्त होने पर नयी अध्यक्ष तथा नयी सचिव सर्वानुमति से चुनी जाती है। इससे समूह के कार्यो में निरन्तरता एवं नवीनता के साथ–साथ किसी एक सदस्य के हाथ में समूह का संचालन केन्द्रित नहीं हो पाता है।

स्व–सहायता समूह के उद्देश्य :–

1. गरीब लोगों में नियमित बचत करने की आदत विकसित करना।
2. जनजातियों जनजातियों के आर्थिक एवं सामाजिक स्तर में परिवर्तन लाना।
3. जनजातियों की ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने के लिए आय सृजक गतिविधियों, छोटे–छोटे व्यवसायों एवं उद्योगों का विकास करना एवं उन्हें आर्थिक सहायता उपलब्ध करवाना।
4. जनजाति परिवारों के जीवन स्तर में सुधार करना।
5. जनजातियों में सामूहिक एकता एवं सहभागिता की भावना का विकास करना।
6. ग्रामीण क्षेत्रों में इस योजना के द्वारा जागरूकता उत्पन्न करना जिससे वे विभिन्न विकास योजनाओं का लाभ उठा सकें।
7. जनजातियों में बैकिंग आदतों को विकसित करना।
8. समूह के सदस्यों में आत्मविश्वास एवं नेतृत्व क्षमता

का विकास करना।

9. महाजनों द्वारा किये जा रहे शोषण को रोकना।
10. एक ऐसी संस्था की स्थापना करना, जिसे सदस्य समझ सकें, उसमें उत्साहपूर्वक भाग ले सकें, जिसमें प्रबन्धकीय व उद्यमिता का विकास हो तथा जिसके माध्यम से सदस्यों की आर्थिक, सामाजिक व राजनैतिक क्षमताओं को बल मिले।

शोध अध्ययन का उद्देश्य :– स्व–सहायता समूह योजना का हितग्राहियों के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन पर प्रभाव का अध्ययन करना।

अध्ययन क्षेत्र :– झाबुआ जिला मध्यप्रदेश के इन्दौर संभाग के अर्न्तगत दक्षिणी–पश्चिमी भाग में स्थित है जिसको अध्ययन क्षेत्र के रूप में चयनित किया गया।

अध्ययन का समग्र :– मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले की स्व–सहायता समूह में सदस्य अनुसूचित जनजाति की समस्त महिलाओं को प्रस्तुत अध्ययन के समग्र के रूप में सम्मिलित किया गया।

अध्ययन की इकाई :– मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले की स्व–सहायता समूह में सदस्य अनुसूचित जनजाति की चयनित महिला उत्तरदाता को प्रस्तुत अध्ययन की इकाई के रूप में सम्मिलित किया गया।

निदर्शन विधि :– प्रस्तुत अध्ययन हेतु स्तरीकृत निदर्शन विधि का उपयोग कर उत्तरदाताओं को चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया है जो कि निम्न प्रकार है :–

तालिका 1

झाबुआ जिले में उत्तरदाताओं का चयन

जिला झाबुआ (उद्देश्यपूर्ण विधि)					
चयनित तहसील (जनसंख्या विधि)					
थांदला	**पेटलावाद**	**मेघनगर**	**झाबुआ**	**रानापुर**	**कुल गांव**
112	240	110	256	95	813
चयनित गांव (निदर्शन संख्या तालिका Random Number Table)					
6	6	6	6	6	30
चयनित उत्तरदाता (कोटा पद्धति एवं उद्देश्यपूर्ण विधि)					
60	60	60	60	60	300

जिले का चयन :– प्रस्तुत अध्ययन हेतु मध्यप्रदेश के आदिवासी बाहुल्य जिला झाबुआ को उद्देश्यपूर्ण विधि के आधार पर चयनित किया गया।

तहसील का चयन :– अध्ययन क्षेत्र झाबुआ जिले की समस्त तहसीलों जिनमें थादला, पेटलावाद, मेघनगर, झाबुआ एवं पटलावाद को जनसंख्या विधि के आधार पर चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया।

गांवों का चयन :– प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु झाबुआ जिले की पाँच तहसीलों में से **(प्रत्येक तहसील से 6 गांव)** कुल 30 गांवों को दैव निदर्शन विधि द्वारा चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया। प्रस्तुत गांवों का चयन दैव निदर्शन संख्या तालिका (Random Number Table) का उपयोग कर की गयी।

उत्तरदाताओं का चयन :– अध्ययन में चयनित प्रत्येक गांव से 10 स्व–सहायता समूह की जनजाति महिला उत्तरदाताओं का चयन उद्देश्यपूर्ण विधि का प्रयोग कर कुल 300 स्व–सहायता समूह की जनजाति महिला उत्तरदाताओं को चयनित कर अध्ययन में सम्मिलित किया गया।

तथ्यों का संकलन :– प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्राथमिक तथा द्वितीयक आंकडों का संग्रहण किया गया तथा उनका विश्लेषण करके निश्कर्ष प्राप्त किये गये।

प्राथमिक संमक :– प्राथमिक आंकडों का संग्रहण निर्मित साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से अध्ययन क्षेत्र में जाकर उत्तरदताओं से प्रत्यक्ष सम्पर्क कर साक्षात्कार कर, क्षेत्र का निरीक्षण एवं अवलोकन तथा समुह चर्चा के माध्यम से एकत्र किये गये। साक्षात्कार अनुसूची में अध्ययन के उददेश्यों के अनुरुप प्रश्नों का समावेश किया गया।

द्वितीयक संमक :– द्वितीयक तथ्यों का संकलन जनजातियों से सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन, शोध पत्र–पत्रिकाएँ, शासकीय प्रतिवेदन, जनगणना प्रतिवेदन, जिला सांख्यिकीय विभाग, पंचायत कार्यालय, कृषि विभाग, सिंचाई विभाग, जिला गजेटियर, समाचार–पत्र, इंटरनेट, एवं विभिन्न पुस्तकालयों में प्रत्यक्ष रूप से अध्ययन आदि के आधार पर किया गया है।

तथ्यों का विश्लेषण :– साक्षात्कार अनुसूची द्वारा प्राथमिक तथ्यों का संकलन किया गया। संग्रहित तथ्यों को अलग–अलग नम्बर (कोड) दिये गये, इन कोड के आधार पर कम्प्यूटर द्वारा एस. पी. एस. एस. (SPSS) पैकेज का प्रयोग करते हुऐ तथ्यों का सारणीयन एवं सांख्यिकी विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत भोध में समूह में सदस्य संख्या, शैक्षणिक स्तर, उम्र, उपजाति, परिवार का प्रकार, वैवाहिक स्थिति, वर्ष में रोजगार के दिन, मासिक आय, आय के स्त्रोत, उत्ततरदाताओं द्वारा की जाने वाली बचत, मकान का प्रकार, उत्तरदाताओं द्वारा कर्ज लेना, कर्ज प्राप्त करने वाले स्त्रोत, कर्ज प्राप्त करने पर ब्याज दर, कर्ज लेने के आधार, कर्ज लेने में समस्या आदि का विवरण दिया गया है।

तालिका क्रमांक 1 समूह में सदस्य संख्या सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	10 सदस्य	224	74.7
2	11 सदस्य	51	17.0
3	12 सदस्य	25	8.3
	कुल योग	300	100.0

समूह में सदस्य संख्या सम्बन्धित विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 74.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके स्व–सहायता समूह में 10 सदस्य संख्या पाई जाती है जबकि 17 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि उनके स्व–सहायता समूह में 11 सदस्य पाई जाती है। 8.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके स्व–सहायता समूह में 12 सदस्य संख्या पाई जाती है।

तालिका क्रमांक 3 समूह संचालन के समय से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	सन् 2013	21	7.0
2	सन् 2014	71	23.7
3	सन् 2015	27	9.0
4	सन् 2016	102	34.0
5	सन् 2017	53	17.7
6	सन् 2018	26	8.7
	कुल योग	300	100.0

उपरोक्त तालिका में प्रस्तुत आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 34 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके समूह का संचालन 2016 से सभी सदस्यों द्वारा किया जा रहा है जबकि सबसे कम 7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके समूह का संचालन 2013 से किया जा रहा है। 23.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा बताया गया कि उनके स्व–समूह का संचालन 2014 से किया जा रहा है वहीं 9 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके स्व–सहायता समूह का संचालन 2015 से किया जा रहा है। 17.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके स्व–सहायता समूह का संचालन 2017 से किया जा रहा है जबकि 8.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके स्व–सहायता समूह का संचालन 2018 से किया जा रहा है।

तालिका क्रमांक 4 उत्तरदाताओं के शैक्षणिक स्तर से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	अशिक्षित	117	39.0
2	प्राथमिक	57	19.0
3	माध्यमिक	54	18.0
4	हाई स्कूल	42	14.0
5	हायर सेकेण्डरी	24	8.0
6	स्नातक	6	2.0
	कुल योग	300	100.0

उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 39 प्रतिशत उत्तरदाता अशिक्षित पाए गए जबकि सबसे कम 2 प्रतिशत उत्तरदाता स्नातक स्तर तक की शिक्षा ग्रहण किए हुए हैं। प्राथमिक शिक्षा ग्रहण किए हुए उत्तरदाताओं का प्रतिशत 19 पाया गया वहीं 18 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा ग्रहण की है। 14 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने हाईस्कूल तक की शिक्षा प्राप्त किए हुए हैं वहीं 8 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उन्होंने हायर सेकेण्डरी तक की शिक्षा ग्रहण की है।

तालिका क्रमांक 5 उत्तरदाताओं की उम्र से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	18 वर्ष से 28 वर्ष तक	77	25.7
2	28 वर्ष से 38 वर्ष तक	151	50.3
3	38 वर्ष से 48 वर्ष तक	66	22.0
4	48 वर्ष से अधिक	6	2.0
	कुल योग	300	100.0

उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 50.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं की उम्र 28 वर्ष से 38 वर्श तक पाई गई वहीं सबसे कम 2 प्रतिशत उत्तरदाताओं की उम्र 48 वर्ष से अधिक पाई गई। 18 वर्ष से 28 वर्ष तक आयु वर्ग के उत्तरदाता 25.7 प्रतिशत पाए गए वहीं 22 प्रतिशत उत्तरदाताओं की उम्र 38 वर्ष से 48 वर्ष तक के पाए गए।

तालिका क्रमांक 6 उत्तरदाताओं की उपजाति से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	डामोर	59	19.7
2	भील	128	42.7
3	राना	63	21.0
4	पटेलिया	23	7.7
5	चौधरी	19	6.3
6	मावी	8	2.7
	कुल योग	300	100.0

उत्तरदाताओं की उपजाति से सम्बन्धित विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 42.7 प्रतिशत उत्तरदाता भील जनजाति के पाए गए जबकि सबसे कम 2.7 प्रतिशत उत्तरदाता मावी जनजाति के पाए गए। 19.7 प्रतिशत उत्तरदाता डामोर जनजाति के पाए गए वहीं 21 प्रतिशत उत्तरदाता राना जनजाति के पाए गए। 77 प्रतिशत उत्तरदाता पटेलिया जनजाति के एवं 6.3 प्रतिशत उत्तरदाता चौधरी जनजाति के पाए गए।

तालिका क्रमांक 7 उत्तरदाताओं के परिवार के प्रकार से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	एकांकी	197	65.7
2	संयुक्त	103	34.3
	कुल योग	300	100.0

उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 65.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार का प्रकार एकांकी पाया गया जबकि 34.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के परिवार का प्रकार संयुक्त पाया गया।

तालिका क्रमांक 9 उत्तरदताओं की वैवाहिक स्थिति से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	विवाहित	291	97.0
2	पत्यिक्तता	9	3.0
	कुल योग	300	100.0

उत्तरदताओं की वैवाहिक स्थिति से सम्बन्धित विवरण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 97 प्रतिशत उत्तरदाता विवाहित पाए गए जबकि 3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि वे परित्यक्ता पाये गये।

तालिका क्रमांक 12 वर्ष में रोजगार के दिनों का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	50 दिन या इससे कम	81	27.0
2	50 दिन से 100 दिन	35	11.7
3	100 दिन से 150 दिन	142	47.3
4	150 दिन से अधिक	42	14.0
	कुल योग	300	100.0

उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 27 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको 50 दिन या इससे कम रोजगार प्राप्त होता है जबकि 11.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको 50 दिन से 100 दिन का रोजगार प्राप्त हुआ। 47.3 प्रतिशत उत्तराताओं ने बताया कि उनको 100 दिन से 150 दिन का रोजगार प्राप्त होता है जबकि 14 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकों 150 दिन या इससे अधिक रोजगार प्राप्त हुआ।

तालिका क्रमांक 13 उत्तरदाताओं की मासिक आय का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	500 रू – 1000 रू	153	51.0
2	1000 रू – 1500 रू	109	36.3
3	1500 रू से अधिक	38	12.7
	कुल योग	300	100.0

उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 51 प्रतिशत उत्तरदाताओं की 500 रू से 1000 रू तक की मासिक आय पाई गई जबकि 36.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं की मासिक आय 1000 रू से 15000 रू के बीच पाई गई। 12.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनकी आय 1500 रू या इससे अधिक आय पाई गई।

तालिका क्रमांक 14 उत्तरदाताओं की आय के स्त्रोंतो का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	मजदूरी	180	60.0
2	अन्य व्यवसाय	120	40.0
	कुल योग	300	100.0

उत्तरदाताओं की आय के स्त्रोंतो का विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 60 प्रतिशत उत्तरदाताओं की आय का स्त्रोत मजदूरी पाया गया जबकि 40 प्रतिशत उत्तरदाताओं की आय का स्रोत अन्य व्यवसाय पाया गया।

तालिका क्रमांक 15 उत्ततरदाताओं द्वारा की जाने वाली बचत से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	50 रू से कम	168	56.0
2	50 रू से 100 रू तक	54	18.0
3	100 रू से 150 रू तक	53	17.7
4	150 रू से अधिक	25	8.3
	कुल योग	300	100.0

उत्तरदाताओं द्वारा की जाने वाली बचत से सम्बन्धित विवरण उपर्यक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया जिसके विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 56 प्रतिशत उत्तरदाताओं के द्वारा की जाने वाली बचत राशि 50 रू से कम पई गई जबकि सबसे कम 8.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं के द्वारा की जाने वाली बचत राशि 150 रू से अधिक पाई गई। 18 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा की जाने वाली बचत राशि 50 रू से 100 रू तक की पाई गई वहीं 17.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा की जाने वाली बचत राशि 100 रू से 150 रू तक की पाई गई।

तालिका क्रमांक 16 उत्तरदाताओं के मकान के प्रकार से सम्बन्धित विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	कच्चा	125	41.7
2	अर्द्ध पक्का	112	37.3
3	पक्का	63	21.0
	कुल योग	300	100.0

उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 41.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मकान कच्चा पाया गया जबकि 37.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मकान अर्द्धपक्का पाया गया जबकि 21 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके मकान का प्रकार पक्का पाया गया।

तालिका क्रमांक 4.17 उत्तरदाताओं द्वारा कर्ज लेने का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	हाँ	187	62.3
2	नहीं	113	37.7
	कुल योग	300	100.0

उत्तरदाताओं द्वारा कर्ज लेने का विवरण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तराताओं में से 62.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं द्वारा कर्ज लिया गया जबकि 37. 7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा बैंक से कर्ज नहीं लिया गया।

तालिका क्रमांक 4.18 यदि हाँ तो कारणों का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	परिवारिक खर्च	21	11.22
2	व्यवाय/रोजगार	94	50.26
3	बच्चें की शिक्षा	29	15.51
4	विवाह	15	8.02
5	बीमारी	28	14.97
	कुल योग	187	100.0

कुल 187 उत्तरदाताओं में से 11.22 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको पारिवारिक खर्च के लिए कर्ज लेने की आवश्यकता होती है जबकि 50.26 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको व्यवाय करने या रोजगार आरम्भ करने के लिए कर्ज लेने की आवश्यकता पड़ती है। बच्चों की शिक्षा हेतु कर्ज लेने वाले उत्तरदाता 15.51 प्रतिशत पाए गए जबकि 8.02 प्रतिशत उत्तरदाता ऐसे पाए गए जिन्होंने बताया कि उन्होंने अपने बच्चों के विवाह के लिए कर्ज लिया।

बीमारी का इलाज कराने के लिए 14.97 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने कर्जा लिया।

तालिका क्रमांक 4.19 कर्ज प्राप्त करने वाले स्त्रोतों का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	स्व–सहायता समूह से	124	66.31
2	साहूकार से	9	4.81
3	बैंक से	30	16.04
4	रिश्तेदाररों से	24	12.84
	कुल योग	**187**	**100.0**

कर्ज प्राप्त करने वाले स्त्रोतों का विवरण उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत किया गया है जिसके विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तराताओं में से 66.31 उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा स्व–सहायता समूह से कर्ज प्राप्त किया जाता है जबकि 4.81 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा साहूकार से कर्ज प्राप्त किया जाता है। 16.04 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा बैंक से कर्ज लिया जाता है जबकि 12.84 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा रिश्तेदारों से कर्ज प्राप्त किया जाता है।

तालिका क्रमांक 4.20 कर्ज प्राप्त करने पर ब्याज दर का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	3 प्रति सैकड़ा	55	29.41
2	5 प्रति सैकड़ा	30	16.04
3	7 प्रति सैकड़ा	102	54.55
	कुल योग	**187**	**100.0**

उपर्युक्त तालिका में प्रस्तुत आंकड़ों के विश्लेषण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 29.41 प्रतिशत उत्तराताओं ने बताया कि 3 रू प्रति सैकड़ा के के हिसाब से कर्ज प्राप्त करने पर ब्याज दर का भुगतान किया जाता है जबकि 16.04 प्रतिशत उत्तरदाताओं के द्वारा 5 प्रति सैकड़ा की दर से कर्ज प्राप्त किया जाता है। 54.55 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको 7 प्रति सैकड़ा की दर से कर्ज प्राप्त होता है।

तालिका क्रमांक 4.21 कर्ज लेने के आधार का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	ब्याज पर	110	58.82
2	जमीन गिरवी रख कर	24	12.83
3	गहने गिरवी रख कर	53	28.34
	कुल योग	**187**	**100.0**

कर्ज लेने के आधार के विवरण से यह ज्ञात होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 58.82 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उन्होंने ब्याज पर कर्ज प्राप्त किया जबकि 12.83 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके द्वारा जमीन गिरवी रखने पर कर्ज प्राप्त हुआ। 28.34 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके गहने रखने उनको कर्ज प्राप्त होता है।

तालिका क्रमांक 4.22 कर्ज लेने में समस्या का विवरण

क्र.	विवरण	आवृत्ति	प्रतिशत
1	बहुत दिनों के बाद मिला है	25	13.36
2	बैंक के चक्कर लगाना पड़ता है	51	27.28
3	जमीदार के यहाँ जाना पड़ता है	24	12.83
4	कर्ज देर से मिलता है	17	9.10
5	सहूकार के घर बार बार जाना	9	4.81
6	कोई समस्या नहीं	61	32.62
	कुल योग	**187**	**100.0**

कर्ज लेने में समस्या का विवरण से यह स्पष्ट होता है कि कुल उत्तरदाताओं में से 13.36 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको बहुत दिनों के बाद मिला है जबकि 27.28 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको बैंक से कर्जा लेने के लिए बैंक के चक्कर लगाना पड़ता है। 12.83 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको कर्ज लेने के लिए जमीदार के यहाँ जाना पड़ता है वहीं 9.10 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको कर्ज देर से मिलता है। 4.81 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको साहूकार के यहाँ बार बार जाना पड़ता है जबकि 32.62 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनको कर्ज लेने में कोई समस्या नहीं है।

सुझाव :–

1. सरकार द्वारा ऐसी योजनाएँ बनाई जानी चाहिए जिससे ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति को

मजबूत बनाया जा सके, निश्चित तौर पर स्वयं सहायता समूह के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक स्थिति को सृदृढ़ बनाया जा सकता है।

2. लघु एवं कुटीर उद्योगों के माध्यम से गरीबी एवं बेरोजगारी को समाप्त किया जा सकता है। स्वयं सहायता समूह एक ऐसा संगठन है, जिसके माध्यम से ग्रामीण महिलाएँ संगठित होकर लघु एवं कुटीर उद्योगों के माध्यम से गरीबी एवं बेरोजगारी को दूर कर रही हैं व स्वरोजगार भी प्राप्त कर रही है। वर्तमान में उनकी आर्थिक व बच्चों की शैक्षणिक स्थिति में सुधार लाने का प्रयास किया जा रहा है।
3. जनजाति महिला–पुरूष के बारे में विचार के मद्देनजर हम कह सकतें है कि हर उन्नत जाति पहले आदिम अवस्था से ही आगें सकती है। अतः विद्यमान जनजाति पुरूष महिलाओं को अपने उत्थान हेतु स्वयं सहायता समूह या सरकारी सहायता से आगे बढ़ना उचित होगा।
4. प्रशिक्षण के अभाव के अलावा और भी कठिनाइयाँ और चुनौतियाँ है जिन पर ध्यान देकर स्वयं सहायता समूह व्यवस्था को अधिक कारगर व लाभप्रद बनाया जा सकता है।
5. महिला सशक्तिकरण में स्वयं सहायता समूहों की भूमिका को अधिक सार्थक व उपयोगी बनाने के लिए जरूरी है कि महिलाओं की क्षमताएँ एवं कौशल बढ़ाने की दशा में कदम उठाए जाएँ।
6. स्वयं सहायता समूहों से ऋण लेने, बैंठकों में जाने और व्यावसायिक गतिविधियों में धन लगाने जैसे कामों के सिलसिले में औरतों को बाहर जाना होता है और कुछ औपचारिकताएँ पूरी करनी होती हैं। ये सभी काम वे तभी कुशलता के साथ कर सकती हैं जब उन्हें प्रतिशत देकर इन गतिविधियों के चलाने के तौर–तरीके सिखाए जाएँ।

सन्दर्भ :–

- कुमार विनोद (2003) लघु वित्त तथा महिला कामगार व्यवस्था सेवा दर्पण, विशेशांक स्वात्रयी महिला सेवा संघ, (मध्यप्रदेश)।
- कुमार (2006) ''शक्ति ने बनाया महिलाओं को आत्मनिर्भर'', समाजवादी दृष्टि।
- खान एस. यू. (2005) ''स्व–सहायता समूह से मजदूर महिलाएँ बनी आत्मनिर्भर'', ग्रामीण भारत।
- खिमसेरा, ज्ञानचनद्र (1995) डॉ. अम्बेडकर का आर्थिक चिंतन, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
- गुप्ता कमला (2001) ग्रामीण महिलाओं के सशक्तिकरण का माध्यम स्वशक्ति परियोजना, डॉ. अम्बेडकर सामाजिक शोध पत्रिका, महू।
- गोपालाकृष्णा बी.के., एसएचजी एण्ड सोशियल डिफेन्स, सोशियल वेलफेयर, वॉल 48, नम्बर 11, फरवरी, 2002.
- डोगरा डोगरा (2002). वुमेन सेल्फ हेल्प ग्रुप्स्: कार्इंडलिंग स्प्रीट ऑफ इन्टरप्रीन्यूरशिप, कुरूक्षेत्र, सितम्बर, 2002.
- चौरसीया बी. पी. (1990) शिड्यूल कास्ट एण्ड शिड्यूल ट्राईब इन इंडिया, क्रो पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
- जिला पंचायत (DRDA) जिला इन्दौर (2002) स्व–सहायता समूह (स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना)
- जैन कुशल (2004) शिक्षा और आर्थिक आत्मनिर्भरता बनाम महिला सशक्तिकरण, डॉ. अम्बेडकर सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका।
- दमेले मंजरी एवं कावड़िया गणेश (2003) शिक्षा तथा सत्ता में भागीदारी द्वारा महिला सशक्तिकरण, बाबा साहेब अम्बेडकर सामाजिक शोध पत्रिका।
- दिनकर राव के. (1992). वुमेन सेविंग एण्ड क्रेडिट स्कीम्सय थ्री केस स्ट्डीज, खादीग्रामोद्योग, अक्टूबर, 1992.

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

डॉ. भीमराव अम्बेडकर का महिलाओं के सामाजिक जीवन पर सशक्तिकरण में योगदान

प्रो. विष्णु भगवान
लोक प्रशासन विभाग, चौधरी देवीलाल विश्वविद्यालय, सिरसा
नरेन्द्र कुमार
शोधार्थी, लोक प्रशासन विभाग, चौधरी देवीलाल विश्वविद्यालय, सिरसा

सारांश :– महिला सशक्तिकरण की अवधारणा के लिए यदि प्राचीन भारतीय दस्तावेजों को देखा जाये तो देखने को मिलता है कि महिलाओं की पहल महात्मा गौतम बुद्ध से मिली है और सम्राट अशोक के समय में विकसित रूप धारण किया। आगे चलकर भारत के अलग–अलग समय में विभिन्न महापुरूषों ने इस महत्वपूर्ण आंदोलन को जारी रखा। इस आन्दोलन में डा. भीमराव अम्बेडकर आधुनिक भारतीय कालखंड के सबसे महत्वपूर्ण पूर्वगामी थे। महात्मा ज्योतिबा फुले ने सबसे पहले नीव रखी थी। महात्मा ज्योतिबा फुले से प्रभावित होकर डॉ. भीमराव अंबेडकर ने उन्हें अपना गुरू मानकर इस आंदोलन को लोकतांत्रिक देश में सफल बनाने की तमाम कोशिश की। आजादी के बाद भारत देश का समकालीन महिला आन्दोलन महिलाओं की उपेक्षा, भोशण और श्रम में लिंग अर्थात पक्षपात को खत्म करने तथा समानता के सिंद्धात का दृढ़तापूर्ण पालन करने की नीति के साथ शुरू हुआ।

20वीं सदी में पूर्वार्ध में महिला के माँ रूप का प्रतीक उभरा महिला शक्ति के अनुसार राष्ट्रमाता के रूप में रक्षा करने वाली महाकाली के रूप में देखा गया। गांधी के अनुसार महिला को कष्ट वाली सहनशीलता माँ के रूप में देखा है। महिलाओं को स्व–स्जोण विचारों एवं राजनैतिक का नारीकरण करने की प्रवृति के कारण उन्हें भारतीय महिला जाग्रति आंदोलन का जनक कहा जाता है। स्वतंत्रत भारत के बाद महिला सबलीकरण के विमर्श में महात्मा गांधी कहा करते थे कि जब तक आधी मानवता के आंखों में आंसू है तो मानवता पूर्ण नहीं मानी जा सकती है।

डॉ0 भीमराव अम्बेडकर का महिला सशक्तिकरण :– डॉ0 अम्बेडकर के सम्पूर्ण विचार का नजरीय सबसे महत्वपूर्ण मंथन का भाग महिला सशक्तिकरण था। उन्होंने भारतवर्ष की तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं राजनैतिक व्यवस्था के भीतर का सूक्ष्म अध्ययन करके जानकारी प्राप्त की सभी समस्या के समाधान की मूल शर्त सामाजिक न्याय और परिवर्तन की क्रांति से है, न की अन्य किसी और बात से है। एक महान फ्रांसीसी लेखक ने एक बार कहा था– ''अगर आप मुझसे जानना चाहते है कि कोई राष्ट्र कैसा है, या कोई सामाजिक समूह कैसा है, तो मुझ यह बताइए कि उस राष्ट्र कि महिलाओं की स्थिति कैसी है'' मतलब यह कि किसी भी देश का चरित्र सबसे अधिक इस बात से लगाया जा सकता है कि वहाँ महिलाओं की क्या स्थिति है, और समाज में महिलाओं का क्या स्थान है? यही बात डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय समाजव्यवस्था में शैक्षणिक, आर्थिक और अन्य क्षेत्रों पर भी उतनी ही लागू होती है इस बात का हमेशा सबसे आगे रखा है।

सामाजिक विचारधारा :– प्राचीन कालीन भारतीय समाज में वर्ण एवं जाति व्यवस्था और सामाजिक संरचन, आधारित होने के कारण भारतीय समाज का व्यवहारिक द र्शन महिला निवारण करने से अस्पृष्ट दिखाई देता है। डॉ0 अम्बेडकर के विस्तृत अध्ययन और दूरदृष्टि में महिला सवाल (शोषण, उत्पीड़न, अज्ञान, अपमान एवं सामाजिक विषमता) का निर्णायक स्वरूप सदियों से चली आ रही विषम समाज व्यवस्था और दृढ़ निरक्षरता के मौजूदगी के कारण है। डॉ0 अम्बेडकर के जीवन का सबसे पहला आंदोलन महाड़ सत्याग्रह था हालांकि यह आंदोलन पीने के पानी से संबंधित था पर महिलाओं के सामाजिक बदलाव के उद्देश्य से डॉ0 भीमराव अम्बेडकर ने कहा कि तुम्हारी गर्भ से जन्म लेना अपराध क्यों माना जाता है और ब्राह्मण महिला के गर्भ से जन्म लेना पुन्य क्यों माना जाता है। उन्होंने उन महिलाओं को सम्यक शील और आत्मसमान को महत्व समझाते हुए कहा कि ''हमें अपने स्वाभिमान को छोड़े बिना गरीबी में ही क्यों ना हो पर हमें इज्जत से जीवन व्यतीत करना चाहिए। ताकि विस्तृत शोषित महिला अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व का विकास करके अपना और अपने परिवार का कल्याण कर सकती है।

किसी भी देश के विकास के लिए उस देश के संतुलित सुशासन के लिए उस देश की दिशा–निर्देश नीति जनकल्याणकारी होना पहली शर्त है। परन्तु आजादी से पहले राष्ट्र व्यवस्था धार्मिक नीति निर्देशों का ही बोलबाला होने के कारण डॉ0 अम्बेडकर

ने महिला सशक्तिकरण के रूप में प्राचीन नीति निर्देश विधि मनुस्मृति दहन किया। जो भारतीय महिला उत्थान के इतिहास के विषय में एक स्मरण करने योग्य घटना है। मनुस्मृति का दहन किया गया वह एक सामान्य रूप से प्रतीकात्मक विरोध था। जिसके कारण शोषित वर्ग से मुक्त होने का रास्ता खुलने लगा। मनुस्मृति के विरोध के निम्न पहलु थे, सभी महिला–पुरूषों को शुद्र कहा था, सभी को सारे सामाजिक अधिकारों से वंचित कर दिया था इतना ही नहीं इस व्यवस्था ने महिलाओं की स्थिति को और भी बुरी कर दिया था। इसलिए मनुस्मृति दहन महिला स्वतंत्रता के रास्ते में एक उज्जवल पहल की शुरूआत मानी जाती है। इस घटना के बाद महिलाओं को एक बड़ा रूप मिल चुका था।

डॉ0 अम्बेडकर से प्रभावित होकर महिलाएं आंदोलन से जुड़ने लगी। बल्कि हर वर्ग कि महिलाओं ने इस आंदोलनों में बढ़ चढ़कर सहयोग देना शुरू किया तथा सामाजिक महत्व और उसके मूल जरूरतों का एहसास जीवित हुआ। अंततः आर्थिक आधार के साथ–साथ साामाजिक और धार्मिक आधार पर भी महिलाओं की स्थिति का अदांजा लगना आव यक है। लिहाजा यह कि मूलतः डॉ0 अम्बेडकर ने महिला उन्मूलन दूरदृष्टि का ही यह निर्णायक कदम था। जिससे सामाजिक न्याय, समान अवसर एवं संवैधानिक स्वतंत्रता के रूप में महिला सशक्तिकरण के लिए उनका योगदान हमेशा याद रखा जायेगा।

सांस्कृतिक विचार :– विश्व में भारतीय संस्कृति सभी देशों से अलग है। यह विश्व के किसी भी देश के साथ मेल नहीं खाती। भारत में सभी धर्मों को मानवे बाल लोग रहते हैं जिनके रीति रिवाज, परंपरा, खानपान में भिन्नता निश्चित रूप में देखने को मिलती है। जिसमें महिलाओं का स्थान पुरूशों की तुलना में संतुष्टिजनक नहीं था।

डॉ0 अम्बेडकर के विचार में महिला के संबंध में विषम सांस्कृतिक वर्चस्व का गंभीर कारण एक तो पितृसत्ताक मनुवादी व्यवस्था है। इसलिए महिलाओं को संबोधित करते हुए महाड़ सम्मेलन 25 दिसंबर 1927 को वह सम्मेलन में सम्बोधित करते हुए कहते है कि अपने को कभी अछूत मत समझो। साफ सुथरा जीवन जियो, सवर्ण महिलाओं के जैसे वस्त्र पहनों यह मत सोचो कि तुम्हारे कपड़ों में जगह–जगह चिंगालिया लगी हैं, बस यह देखना है कि वे साफ तो है वस्त्र चुनने और गहनों में धातु के इस्तेमाल में तुमे कोई नहीं रोक सकता। डॉ0 भीमराव अम्बेडकर कहतें है कि पति पुत्र भाराब पीते है तो उनको किसी भी हालत में खाने को मत दो। अपनी सन्तान को विद्यालय भेजो और कहते है कि शिक्षा जितनी पुरूषों को जरूरी है उतनी ही महिलाओं को भी है। अगर तुमने शिक्षा प्राप्त कर ली तो तुम अधिक आगे निकल जाओगे। जैसे तुम बनोगे वैसे ही तुम्हारे बच्चे होंगे। उनके जीवन को सद्गुणों से भरो, क्योंकि पुत्र व पुत्री ऐसे होने चाहिए कि उन पर सारी दुनिया नाज करे।

जिस देश में मानवकल्याण रहित परंपरा और रूढ़ियाँ का रिवाज ही कानून की जगह ले चुकि हो। वहाँ कही न कही अन्याय, शोषण एवं उत्पीड़न मौजूद होता ही है। जहां यह उद्घोष हो की 'रूधिविधेग्रारियासी' अर्थात रिवाज कानून से भी अधिक शक्तिशाली है। वहाँ महिलाओं में सांस्कृतिक पहचान एवं गरिमा जिंदा रखने के लिए डॉ0 अम्बेडकर ने विरोध करने वाली व्यवस्था के खिलाफ चले।

शैक्षणिक विचार :– सुकरात के अनुसार ज्ञान सबसे बड़ी शक्ति है। इसलिए डॉ0 भीमराव अम्बेडकर को आधुनिक भारत का सुकरात कहना गलत नहीं होगा। क्योंकि भारत में समाज के लिए शिक्षा का महत्व और आगे बढ़ाने वाला एकलोते प्रतिष्ठिता डॉ0 अम्बेडकर थे। उनके शुरूआती शिक्षा सफर में रहते हुये शिक्षा का महत्व और आवश्यकता को संबोधित करते हुये 4 अगस्त 1913 को गंगू को न्यूयार्क से डॉ0 अम्बेडकर पत्र में लिखते है की, ''हमें पूरी इस धारणा को छोड़ देना चाहिए कि अभिभावक सन्तान को 'जन्म' देते है न की 'कर्म'। वे अपने सन्तान का भाग्य भी बदल सकते हैं और यदि हम केवल इस सिद्धान्त का अनुसरण करते है। तब हमें निश्चित रूप से मान लेना चाहिए की हम जल्द ही अच्छे दिन देखेंगे और हमारे समाज का विकास और अधिक हो जाएगा। गंगू जमादार की एक लड़की महार समाज की वह पहली लड़की थी जो उस समय में चौथी कक्षा में पढ़ रही थी। पुरूष शिक्षा के साथ–साथ महिला शिक्षा भी चलनी चाहिए, उसका फल एवं मेहनत आपको अपने बेटी के शिक्षित होने पर देखने को मिल सकता है।''

डॉ0 अम्बेडकर के विचार में यह स्पष्ट देखा जाता है कि अगर हम लड़कों के साथ–साथ लड़कियों की शिक्षा की और केन्द्रित होने लग जाए, तो हम जल्द तरक्की पा लेगे। शिक्षा किसी वर्ग की गुलाम नहीं। उस पर किसी एक ही वर्ग का अधिकार नहीं। समाज के प्रत्येक वर्ग को शिक्षा का समान अधिकार है। महिला शिक्षा पुरूष से भी अधिक महत्वपूर्ण है। क्योंकि पूरी पारिवारिक व्यवस्था की धुरी महिला ही है इसे हम नकार नहीं सकते।

राजनैतिक विचार :– जब तक किसी राष्ट्र में सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और शैक्षणिक क्रांति नहीं होगी तब तक राजनैतिक क्रांति नहीं हो सकती। यह डॉ0 अम्बेडकर के राजनैतिक दर्शन का सार था। इस दर्शन के सार में आधी आबादी के उन्मूलन का निर्धारण भी मुख्य रूप से शामिल है। सन् 1932 का पूना पेक्ट, हिंदू कोड बिल जैसी दर्शन शाखाओं के प्रीतकात्मक प्रलेख है। कोई भी आंदोलन एक राजनैतिक हितसंबंध से संबंधित होते है। क्योंकि कानून व्यवस्था में लोकतांत्रिक व्यवस्था में राजनैतिक ही ऐसी चाबी है जो सारे ताले खोल सकती है।

डॉ0 अम्बेडकर ने सर्वांगीण भारतीय समाज व्यवस्था का आधा हिस्सा महिला वर्ग के सशक्तिकरण के लिए हिंदू कोड बिल नामक प्रामाणिक कानूनी कागजात सन् 1951 में तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित ज0 नेहरू के मंत्रिमण्डल में केंद्रीय विधि मंत्री रहते हुए संसद में पेश किये। पर कुछ धार्मिक मतभेदों के कारण अधिक सांसदों ने बिल का विरोध किया। जिस कारण बिल पास नहीं हो सका। किसी भी समाज को स्वस्थ रखने के लिए उसे एक दायरे या लाईन में रखने के सभी समान सामाजिक कायदे कानून होने चाहिए ताकी वह उनका पालन करता हो और अपना अस्तित्व बनाये रखे। इसलिए कानूनी रूप से भारत के महिला सशक्तिकरण के लिए पहला कानूनी दस्तावेज़ हिंदू कोड बिल का निर्णय किया था।

महाराष्ट्रियन दलित लेखक बाबुराव बागुल कहते है, ''हिन्दू कोड बिल महिला सशक्तिकरण का असली आविष्कार है और गंभीर राष्ट्रीय विमर्श की भावना से कहते है की ''अस्पृश्यता को नकारने वाली भीमस्मृति और अस्पृश्यता का पालन करने वाली मनुस्मृति एक ही सभागृह में और एक ही घर में साथ–साथ राज करती हैं। यानी देश एक ही समय में दो स्मृतियों, दो सत्ताओं और दो जीवंत–पद्धतियों में जीता है।'' तात्पर्य यह की डॉ0 अम्बेडकर यह बात जानते थे कि महिलाओं की स्थिति सिर्फ ऊपर से उपदेश देने से नहीं सुधरने वाली कानून में उसके लिए व्यवस्था करनी होगी। इसी कारण हिंदू कोड बिल के अस्तित्व में डॉ0 भीमराव द्वारा लाया गया।

हिन्दु कोड़ बिल के बिन्दू :–

- यह बिल हिंदू महिलाओं तरक्की के लिए प्रस्तुत किया गया था।
- इस बिल की वजह से ही महिलाओं को तलाक देने का अधिकार प्राप्त था।
- तलाक मिलने पर गुजारा भत्ता मिलने का अधिकार।
- एक पत्नी होते दूसरी शादी न करने का अधिकार।
- गोद लेने का अधिकार।
- बाप–दादा की संपत्ति में हिस्से का अधिकार।
- महिलाओं को अपनी आमदनी पर अधिकार।
- लड़की को उत्तराधिकारी का अधिकार।
- अंतरजातीय विवाह करने का अधिकार।
- अपना उत्तराधिकारी निश्चित करने की स्वतंत्रता।

सभी मुख्य बिंदुओं के मूल्यांकन से स्पष्ट होता है कि भारतीय महिलाओं के लिए हिन्दु कोड बिल सभी समस्या कि दवा थी। क्योंकि वह जानते थे कि असल में समाज कि मानसिकता जब तक नहीं बदलेगी तब तक व्यावहारिक सोच विकसित नहीं हो सकेंगी। अफसोस कि यह बिल संसद में पास नहीं हो पाया इसी कारण डॉ0 अम्बेडकर ने विधि मंत्री पद को छोड़ दिया। जिससे यह स्पष्ट होता है कि उनको महिला कल्याण के लिए अपने पद का बलिदान भी दे दिया भारतीय महिला क्रांति का 'मसीहा' कहा जाने पर को सन्देह नही है।

हिंदू महिलाओं के उत्थान और बदलाव के लिए जो कष्ट एवं मेहनत डॉ0 अम्बेडकर ने की है। ऐसा किसी का नाम इतिहास में मिलना मुश्किल है।

अम्बेडकरोत्तर भारतीय समाज में महिला का उत्पीड़न :– 20वीं सदी के मध्य में डॉ0 अंबेडकर की मृत्यु होने के पश्चात 21वीं सदी का आधुनिक समाज में महिला को परिवार के अन्दर उत्पीड़न आज भी देखने को मिलता मिल जाता है। विश्व में पहला महिला मुक्ति का मेनिफिस्टो देने वाली मेरी वॉलस्टोनक्राफ्ट और बाद में बेट्टी फेडेन वैश्विक जगत को महिला सशक्तिकरण कि प्रेरणा स्त्रोत रही। पर डॉ0 अम्बेडकर की मृत्यु के पश्चात भारतीय परिदृश्य में महिला सशक्तिकरण का आंदोलन बहुत धीरे होने लगा। अम्बेडकरोत्तर सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक बदलाव के संबंध में एम.बी. फुलर कि रचना 'द रोम्स ऑफ इंडियन विमेजहुड' में वह लिखती है कि ''पर्दे के पीछे क्या होता है यह भारत में बहुत कम लोग जानते है उसके अनुसार, भारतीय समाज सुधारक भी महिला की वास्तविक स्थिति से अंनशित थे।'' भारतीय महिलाओं को खुद को भी उस गर्व की गहराई का अन्दाजा नहीं था जैसे वे उस समय थी। अमानवीय अत्याचार सहत

करने के बावजूद महिलाओं ने अपना दुख दर्द किसी के सामने नही बतना चाहती थी। क्योंकि वह अपने परिवार को बेज्जत नही करवाना चाहती थी।

आधुनिक तकनीकी विकास ने भी महिला, शोषण, दमन तथा उसके विरोध हिंसा को बढ़ावा दिया है। मसलन भ्रूणहत्या को बढ़ावा मिला (हालांकि विदेशों में भ्रण परीक्षण विकलांता जानने के लिए किए जाते है।) लेकिन हमारे समाज में इसका गलत प्रयोग किया जाता है। इसका ताजा उदाहरण जनगणना 2011 के अनुसार हरियाणा में सेक्स रेसियों, 1000:861 है। यही हजार पुरूशों के पीछे 861 महिला मतलब भ्रूणहत्या और अन्य कारणों से ही रेसो गिरा है। लिहाजा यह कि सामाजिक संतुलन बनाएँ रखने में राष्ट्र नीति खतरे में है।

अंबेडकरोत्तर काल में महिला सशक्तिकरण की अवधारणा पुरानी होती दिखाई दे रही है। हमें एक लोकतन्त्र ढंग से इस समस्याओं का निवारण करना चाहिये। जैसे एक लोकतन्त्र में मताधारक पक्ष उतना ही महत्वपूर्ण होता है, जितना विरोधिपक्ष इस लिहाज से जो तत्व हमने राजनीतिक मानवता से सम्पूर्ण देश को दिए है वह तत्व अगर हम व्यावहारिकता में भी चलाने में कामयाब हो जाते तो समस्या न देखने को मिलती। सरकारी तंत्र प्रणाली के कोशिशों के बावजूद सही मात्रा में सफल नहीं हो पायी है।

अंबेडकरोत्तर काल में पुरूष इस बात को हमेशा झुटलाता रहा है की समाज की तरक्की और निर्माण में पुरूष और महिला समान रूप से सहभागी है। इस संदर्भ में पूर्व राष्ट्रपति के.आर. नारायण का कहना है, 'महिलाओं पर अत्याचार अपने क्रूरतम रूप में जारी है और महिलाओं तथा दलितों के साथ भेदभाव उन्हें प्रजातन्त्र को अधिकार से दूर रखने जैसा है। महिलाओं के लिए आत्मनिर्भरता कोई हर समस्या का समाधान या हर मर्ज की दवा नहीं लेकिन परंपरा से हटकर जीवन गुजरने के रास्ते को सरल जरूर बनाती है। परंपरा या रिवाज के खिलाफ जाकर सहजीवन को भी जीने के लिए महिलाओं का अपने ऊपर निर्भर होना सबसे जरूरी शर्त हो जाती है।

अंततः डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर के अवलोकन में महिला प्रश्न भारत में किसी भी दूसरे विकसित या पिछड़े मुल्क की बराबरी में अधिक जटिल था। यह जटिलता परिवार, समाज, संस्कृति, कानून, रोजगार हर स्थल पर सेकड़ों रूपों में मौजूद था। वह समझते थे की इस जटिलता को नजरंदाज करना देश के आधी आबादी के लिए नई गुलामी की बेड़ियाँ में बाधने जैसा लगता है। उनका दावा था की इस विशाल और जटिल देश में महिलाओं के संघर्श कहीं गहरे है। इन संघर्षों की संस्कृतिक जमीन को पुख्ता करना महिला स्वतन्त्रता की प्राथमिक और जरूरी शर्त है। उनकी दृष्टि में महिलाओं की गुलामी और प्रताड़ना की कुंठा के साथ नहीं बल्कि अपने इतिहास की इस पूरी गरिमा के साथ उन्हे सामानता का एम नया दावा प्रस्तुत करने का एक मौका देने से था।

निष्कर्ष :– डॉ0 अम्बेडकर का सबसे प्रसिद्ध मूलमंत्र ही शिक्षित बनो से होती है इस मूलमंत्र से आज कितनी महिलाएं शिक्षित और सुशिक्षित होकर अपने पैरों पर जीवन यापन कर रही है। हजारों साल पुराना एस.सी., एस.टी. और ओ.बी.सी. वर्ग आज के सामान्य वर्ग के साथ बराबरी से खड़ा है। आज एक दलित महिला मुख्यमंत्री बन चुकी है। इस संदर्भ में डॉ0 अम्बेडकर का महिला शिक्षा आंदोलन एवं योगदान वर्तमान राष्ट्र निर्माण के लिए प्रेरणा स्त्रोत सिद्ध साबित होता है।

संदर्भ सूची :–

1. बाली, एल. आर., (2006), डॉ0 अम्बेडकर जीवन और मिशन, भीम पत्रिका पब्लिकेशन जालन्धर।
2. शहारे, महादेव लाल, (2015) डॉ0 भीमराव अम्बेडकर जीवन और कार्य, एन.सी.आर.टी., द्वितीय मुद्रण, नई दिल्ली।
3. गर्दा लर्नर (2016) 'दि क्रिएशन ऑफ पेट्रारची'।
4. जॉन स्टुअर्ट मिल, दि राइज़, दि सब्जेक्शन ऑफ विमन'।
5. स्ट्रेट ऑफ वीमेन कमिटी रिपोर्ट।
6. 4 अगस्त 1913 को जमादार को न्यूयार्क से पत्र।
7. जेव्हा की जात चोरली (when I had concealed my caste) बाबुराव बागुल।
8. एम.बी. फुलर कि रचना 'द रोम्स ऑफ इंडियन विमेजहुड'।
9. जनगणना 2011।
10. https:gimk.wikipedia.org.wiki.
11. https://feminiminindia.com
12. http://www.youthkiawuuz.com

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

भोपाल जिले के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की सृजनात्मकता का अध्ययन

प्रो. ममता बाकलीवाल
विभागाध्यक्ष, शिक्षा संकाय, राजीव गांधी महाविद्यालय, भोपाल
श्रीमती संध्या जैन

भोपाल जिले के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की सृजनात्मकता का अध्ययन करने हेतु भोपाल जिले के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के शासकीय विद्यालयों से कक्षा 9वीं के कुल 144 विद्यार्थियों को चयनित किया गया। सृजनात्मकता के मापन हेतु बी.के. पासी द्वारा निर्मित 'शाब्दिक परीक्षण का प्रयोग ऑकड़ों को एकत्रित करने के लिए किया गया।

शिक्षा मानव जीवन के विकास की धुरी है जिसके द्वारा व्यक्ति का सर्वांगीण विकास होता है। मुदालियर शिक्षा आयोग ने बालकों के चहुँमुखी व्यक्तित्व के विकास के लिए ऐसी शिक्षा व्यवस्था की सिफारिश की जिससे उसमें साहित्यिक, सांस्कृतिक, कलात्मक गुणों और शैक्षिक उपलब्धि में भी वृद्धि हो सके। प्रत्येक व्यक्ति अपनी कुछ व्यक्तिगत विशेषतओं विभिन्नतओं व मौलिकता के साथ जन्म लेता है। साथ ही परिस्थितियॉ भी इस पर प्रभाव डालती है। सृजनात्मकता वृत्तियों से सम्पन्न व्यक्ति में कुछ विशेष गुण होते हैं जिनकी पहचान कर लेना उनकी प्रतिभा के विकास के लिए आवश्यक है।संसार में अनेक बस्तुएं है किन्तु वस्तु को देखने पर मन में एक विचार या दृष्टिकोण बनता है हम अपनी दृष्टि को सृजनात्मकता के साथ इस ओर ले जाएं और देखे कि खुद ऐसा नया प्रस्तुत करे, निर्माण करें, कि वह वर्तमान से कुछ भिन्न हो, नवीन हो रचनात्मक हो और समाज एंव विश्व के लिए उपयोगी हो। ये तभी संभव है, जब व्यक्तियों में सृजनात्मक विचार एंव दृष्टिकोण पाया जाए। वर्तमान समय में विद्यार्थियों में शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त करने का सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य होता है इसे प्राप्त करने के लिए अनेक कारक प्रभाव डालते है जैसे सृजनात्मकता अभिप्रेरणा आदि।

ठाकुर एवं शर्मा (2013) ने विद्यार्थिओं की बुद्धि एवं सृजनात्मकता के बीच सह संबंध पाया। अर्थात् बुद्धि उच्च होगी तो सृजनशीलता उच्च होगी।

आधुनिक समय में तीव्रगति से हो रहे वैज्ञानिक तकनीकी एवं औद्योगिक प्रगति व विकास तथा आधुनिकीकरण ने मानव जीवन को इतना जटिल तथा समस्याग्रस्त बना दिया है कि इन समस्यायों के समाधान के लिए जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सृजनात्मकता की आवश्यकता महसूस की जाने लगी है। गैटजेल्स एंव जेम्सन के अनुसार ''यह आवश्यक नहीं कि केवल उच्च बुद्वि वाले छात्र सृजनात्मक हो कुछ छात्र ऐसे भी होते हैं जो बुद्वि लब्धि में उच्च न होते हुए भी सृजनशीलता में बहुत आगे होते हैं'' परिणामस्वरूप सृजनात्मकता को बुद्वि से हटाकर एक अलग योग्यता के रूप में स्वीकार किया जाने लगा है। दिशा–ग्रामीण शहरी एंव अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों की बुद्वि उपलब्धि एवं सृजनात्मकता के मध्य संबंध पाया।

उददे्श्य :–

(1) माध्यमिक स्तर की ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की सृजनात्मकता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

न्यादर्श :– प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु भोपाल जिले के माध्यमिक स्तर की ग्रामीण एंव शहरी शालाओं की कक्षा 9 वीं की 36,36 छात्राओं एवं 36,36 छात्रो का चयन किया कुल ग्रामीण क्षेत्र से 72 विद्यार्थियों और शहरी क्षेत्र से 72 विद्यार्थियों को चयन किया गया। न्यादर्श चयन हेतु यादृच्छिक प्रतिचयन पद्धति को अपनाया गया।

उपकरण :– सृजनात्मक के मापन हेतु बी.के. पासी द्वारा निर्मित 'शाब्दिक परीक्षण' का उपयोग किया गया।

सांख्यिकीय प्रविधियॉ :– डाटा के विश्लेषण के लिए मध्यमान,मानक विचलन एंव क्रांतिक मान का प्रयोग किया गया।

परिकल्पनाऍं:–

(1) माध्यमिक स्तर की ग्रामीण एवं शहरी छात्राओं की सृजनात्मकता में सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका क.1

माध्यमिक स्तर की छात्राओं की सृजनात्मकता का कांतिक परीक्षण परिणाम :–

क.	समूह	कुल संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	गणना से प्राप्त कांतिक मान	सार्थकता स्तर 0.05	निष्कर्ष
1.	ग्रामीण क्षेत्र की छात्राएं	36	82.58	16.88	3.04	2.34	सार्थकता में अंतर पाया गया
2.	शहरी क्षेत्र की छात्राएं	36	79.66	17.97			

स्वतंत्रता के अंश–70 **0.05 सार्थकता स्तर**

उपर्युक्त तालिका 01 के देखने से स्पष्ट होता है कि 'टी' का परिकलित मान 3.04 है जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर 2.34 'टी' के तालिका से अधिक है। अतः परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। अर्थात् शहरी व ग्रामीण छात्राओं की सृजनात्मकता में सार्थक अंतर गया।

ग्रामीण छात्राओं में सृजनात्मकता का मध्यमान शहरी छात्राओं की अपेक्षा अधिक पाया गया। इसलिए ऐसा माना जा सकता है कि ग्रामीण छात्राओं में सृजनात्मकता का गुण शहरी छात्राओं की अपेक्षा अधिक पाया गया।

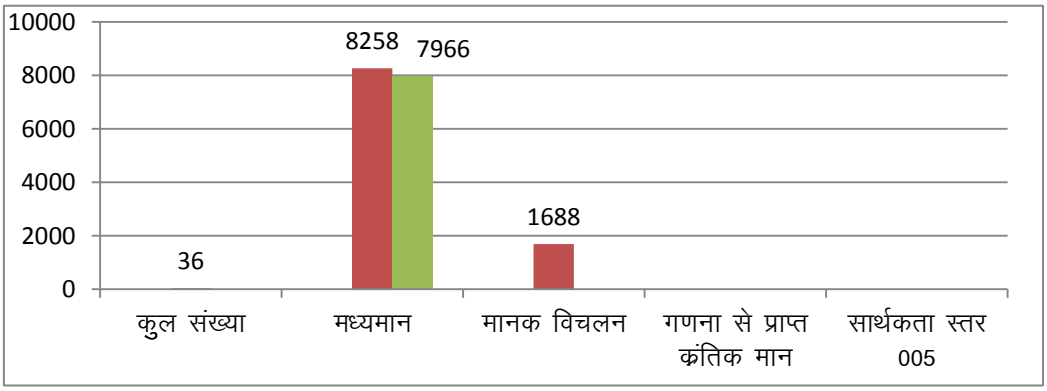

परिकल्पना क्रमांक (2) :– माध्यमिक स्तर के ग्रामीण एवं शहरी छात्रों की सृजनात्मकता में सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका क. 02

माध्यमिक स्तर के छात्रों की सृजनात्मकता का कांतिक परीक्षण परिणाम :–

क.	समूह	कुल संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	गणना से प्राप्त कांतिक मान	सार्थकता स्तर 0.05	निष्कर्ष
1.	ग्रामीण क्षेत्र के छात्र	36	75.6	16.06	0.14	2.34	सार्थक अंतर नहीं है।
2.	शहरी क्षेत्र के छात्र	36	75.5	12.27			

स्वतंत्रता के अंश–70 **0.05 सार्थकता स्तर**

उपर्युक्त तालिका 02 के देखने से स्पष्ट होता है कि 'टी' का परिकलित मान

0.14 है जो कि सार्थकता स्तर 0.05 पर 2.34 के तालिका मान से कम है। अतः परिकल्पना स्वीकृत की जाती है अर्थात् शहरी व ग्रामीण छात्रों की सृजनात्मकता में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। ग्रामीण छात्रों में सृजनात्मकता का मध्यमान शहरी छात्रों के बराबर पाया गया इसीलिए दोनों में सृजनात्मकता बराबर पाई गई।

आरेख क्रमांक – 02

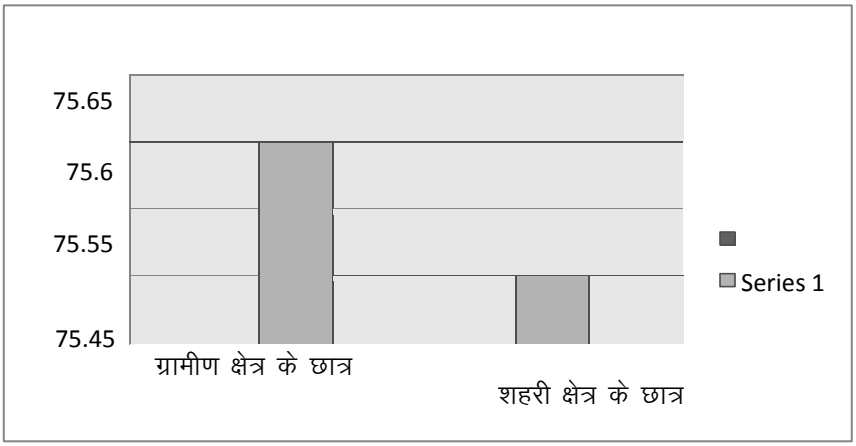

निष्कर्ष :–

1. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की छात्राओं की सृजनात्मकता में सार्थक अंतर पाया गया।
2. ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के छात्रों की सृजनात्मकता में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

सुझाव :–

(1) क्षेत्रों की समान परिस्थितियों में सृजनात्मकता का गुण विकसित किया जा सकता है।

(2) यह अध्ययन महाविद्यालय के विद्यार्थियों पर भी किया जा सकता है।

(3) सृजनात्मकता योग्यता वाले विद्यार्थियों एवं सामान्य विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

- शर्मा, आर.ए.(1999), शिक्षा अनुसंधान, मेरठ सूर्या पब्लिकेशन।
- सिंह अरूण कुमार–शिक्षा मनोविज्ञान, भारती भवन (पब्लिशर्स एडं ड्रिस्ट्रीव्यूटर्स) पटना।
- गैरिट हेनरी ई.– शिक्षा एवं मनोविज्ञान में सांख्यिकी कल्याणी पब्लिशर्स।
- ठाकुर, दिनेश एवं शर्मा, नीरजा (2013) "कक्षा नवमी के विद्यार्थियों की बुद्धि एवं सृजनात्मकता के मध्य संबंध का अध्ययन'', जनरल ऑफ
- एंडवासड, स्टडी ऑफ एजुकेशन, वाल्यूम नं. 1, अक्टूबर 2013 आई. ए. एस. ई , भोपाल पेज न. 114–20।
- श्रीवास्तव, दिशा एवं निगम भूपेन्द्र (2004); ''ए कोरिलेशन स्टडी ऑफ अचीवमेंट, इंटेलीजेन्सी एंड क्रियेटिविटी ऑफ हाईस्कूल स्टूडेन्ट्स ऑफ जबलपुर डिवीजन, एशियन जर्नल ऑफ पर्सनालिटी एण्ड एजुकेशन दिसम्बर वा. 3, साइकोलॉजी रिसर्च सेल आगरा, पृ. क्रं. 28–35।

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

इंदौर नगर निगम में महिला पार्षदों की भूमिका

रामकुँवर भाबर
शोधार्थी, पीएच. डी. राजनीति विज्ञान, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर
डॉ. उषा तिवारी

इन्दौर नगर के विषय में कुछ इतिहासकारों की यह मान्यता है कि इस नगर का प्राचीन नाम इन्द्रपुर था, और इन्द्रवर यहां के ग्राम देवता के रूप में पूजे जाते थे जिनका मन्दिर नगर के मध्य जूनी इन्दौर में आज भी विद्यमान है। यह भी संभावना है कि राष्ट्रकूट राजा इन्द्र ने मालवा विजय के समय इस स्थान पर जिस मंदिर की स्थापना की थी, उसका नाम इन्द्रेश्वर पड़ा हो।

इन्दौर मध्यप्रदेश प्रान्त का एक प्रमुख शहर है। आर्थिक दृष्टि से यह मध्यप्रदेश की व्यावसायिक राजधानी है। वास्तव में इन्दौर शहर का संस्थापक जमीन्दार परिवार है जौ आज भी बड़ा रावला जूनी इन्दौर में निवास करता है। सन् 1715 में बसा यह शहर मराठा वंश के होल्कर राज्य में मुख्य धारा में आया। 18 मई 1724 को हैदराबाद निजाम ने इंदौर पर पेशवा बाजीराव प्रथम का आधिपत्य स्वीकार किया। इसके बाद पेशवा ने इंदौर को सूबा बनाकर मल्हारराव होल्कर प्रथम को सूबेदार नियुक्त किया। कालांतर में मराठा साम्राज्य के प्रभाव के कारण इन्द्रपुर इंदूर कहलाने लगा होगा। फिर जब 19 वीं सदी में अंग्रेजी शासन काल में पाश्चात्य शिक्षा का प्रभाव बढ़ा तब इसे इंदूर, इन्दुवर कहलाते कहलाते इंदौर हो गया होगा।

इन्दौर जनसंख्या की दृष्टि से मध्य प्रदेश का सबसे बड़ा नगर है। यह जिले एवं संभाग का मुख्यालय भी है। मध्य भाग में स्थित इन्दौर वाणिज्य, वित्त, मीडिया कला, फैशन, शोध, तकनीकी, शिक्षा एवं मनोरंजन के क्षेत्र में इसका व्यापक प्रभाव है। यह मालवा के पठार के दक्षिण किनारे में स्थित है तथा मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल के पश्चिम में 190 किलोमीटर दूरी पर स्थित है। वर्ष 2011 की जनसंख्या के आकड़े के अनुसार इसकी जनसंख्या 3,276,697 है तथा इसकी भूमि सीमा लगभग 3898 वर्ग किलोमिटर है।

भौगोलिक स्थिति :– इन्दौर जिले के उत्तर में उज्जैन जिल, दक्षिण में पश्चिमी निमाड़ जिला पूर्व में देवास जिला तथा पश्चिम में धार जिले की सीमाएँ लगी हुई है। इन्दौर जिले की सीमाएं तीन और से प्रकृतिक रूप से घिरी हुई है जैसे कि पूर्व में क्षिप्रानदी, पश्चिम में चंबल नदी तथा दक्षिण में चोरल नदी। ये दोनों नदियां आगे जाकर दक्षिण में नर्मदा नदी से मिल जाती है। इसकी उत्तरी सीमाएं लगभग बनावटी रेखाएं है।

इन्दौर जिले का कुल क्षैत्रफल 1,479,16 वर्ग मीटर अथवा 38,30,61 वर्ग किलोमिटर है। 1961 की जनगणना के अनुसार इसकी कुल जनसंख्या 7,53,594 थी जिसमें 400,470 पुरूष एवं 3,53,124 महिलाएं, सम्मिलित है।

जनांकिकी :– डिमोग्राफी का अंग्रेजी शब्द हिन्दी में जनाकिंकी होता है। इस शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा से हुई। डिमोस जिसका अर्थ होता है मनुष्य और दूसरा शब्द ग्राफी है जिसका अर्थ है लिखना था अंकित करना। इस प्रकार डिमोग्राफी का शाब्दिक अर्थ हुआ मनुष्य या जनता के विषय में लिखना या अंकित करना। गुडलाड ने संक्षेप में कहा है कि यह वह विज्ञान है जो मनुष्य की संख्या के विषय में अध्ययन करता है। डिमोग्राफी (जनांकिकी) शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम फ्रांसीसी विद्वान अशिले गुइलाई द्वारा 1855 में अपनी पुस्तक ''ऐलोमेन्ट डेसटेटीक्यू हूमन आन डिमोग्राफिक कम्येर'' में किया है।

बेन्जामिन बी ने कहा है कि जनांकिकी सामूहिक रूप में मानव जनसंख्या की वृद्धि विकास तथा गति शीलता से संबंधित है। अशिले गुडलाई ने लिखा है कि यह जनसंख्या की सामान्य गति और भौमिक, सामाजिक तथा बौद्धिक दशाओं का गणितीय ज्ञान है।

लार्ड कीन्स ने जनांकिकी के क्षेत्र के अध्ययन में तीन बाते सम्मिलित की है–

1. संबंधित शास्त्र (जनांकिकी) की विषय सामग्री,
2. संबंधित शास्त्र (जनांकिकी) की प्रकृति या स्वरूप
3. संबंधित शास्त्र (जनांकिकी) का अन्य शस्त्रों या विज्ञानों से संबंध।

जनांकिकी की विशेषताओं के आधार पर जनसंख्या का वर्गीकरण किया जा सकता है। जैसे –

– आयु संरचना
– लैगिंक संरचना
– कार्यशील जनसंख्या
– वैवाहिक पस्थिति
– धर्मानुसार या जाति के अनुसार विंवरण

327233 इन्दौर जिले की जनगणना वर्ष 2011 के अनुसार इसकी कुल जनसंख्या है। पुरूष तथा स्त्री जनसंख्या क्रमशः 1700483 तथा 1577182 है। जनसंख्या का घनत्व 471 व्यक्ति प्रतिवर्ष किलो मीटर है। ग्रामीण एवं नगर की कुल जनसंख्या पर दृष्टि डोले तो इसकी नगर की कुल जनसंख्या 24243 है तथा ग्रामीण जनसंख्या 848023 है। जिले की कुल जनसंख्या दर 32.7 प्रतिशत है इन्दौर जिले में बच्चों की संख्या को को दे 0–6 के बच्चों की जनसंख्या 407536 है। जिसमें ग्रामीण क्षेत्र की जनसंख्या 121234 है तथा नगरीय क्षेत्र के बच्चों की संख्या 286302 है।

लोकतंत्र तब तक पूर्ण नहीं सकता, जब तक की शासन के प्रत्येक स्तर पर जनता की भागीदारी सुनिश्चित न हो। विशेष रूप से वर्तमान लोकतांत्रिक शासन में जहा यह माना जाता हैं की राज्य सरकार एवं सत्ता का संबंध सीधा जनता से है और सरकार जनता की सेवक है तथा जन कल्याण के लिए वह कार्यरत रहती है।

भारत में स्वतंत्रता के आगमन में संविधान के भाग (4) में उल्लेखित राज्य के निति निर्देशक सिद्धांतो में वर्णित सामाजिक आर्थिक सुधारों में एक नये अध्याय का श्री गणेश किया, जिसके परिणाम स्वरूप नागरिकों के अवसरो को प्राप्त करले के लोक लल्याण कारी राज्य के उद्देश्य को स्वकार किया। सन् 1950 में संविधान के लागू होने के साथ ही स्थानीय सरकार ने एक नये युग में प्रवेश किया।

महात्मा गॉधी ने 1946 में ठीक ही कहा था की भारतीय स्वाधीनता सबसे नीचे शुरू होना चाहिए और प्रत्येक ग्राम कि पंचायत का गणराज्य होना चाहिए जिसके पास सत्य अधिकार हो। गॉधी जी ग्राम स्वराज्य के घोर प्रशासक और समर्थक थे। राज्य के निति निर्देशक सिद्धांत के अनुच्छेद 40 में लिखा गया है, कह राज्य ग्राम पंचायतों का गठन करने के लिए कदम उठायेगा।

जवाहरल लाल नेहरू ने भी प्राचीन भारत में ग्राम स्तर पर लोकतांत्रिक संस्थाओं का उल्लेख किया था और कहा था की भारत की शक्ति वास्तव में ग्राम गणराज्यों अथवा स्वशासी की उसकी व्यवस्था में निहिमत है। ये पंचायते ग्रामीणों द्वारा चुनी जाती थी और इस व्यवस्था में एक लोकतांत्रिक आधार था। नेहरू जी ने 16 मार्च 1963 को कहा था की सामुदायिक विकास और पंचायती राज देश के सर्वाधिक सहायक विकासक्रमो में थे। और दोनों ने मिलकर एक आंदोलन का रूप लिया हुआ था।

भारतीय लोकतंत्र में जनता की भागीदारी सुनिश्चित करने के विशेष प्रावधान भारत के संविधान में किये गए है। भारत के स्वतंत्रता आंदोलन मं कांग्रेस के नेतृत्व में पुरूष वर्ग के साथ साथ महिला वर्ग की भी विशेष भूमिका रही तथा महिलाओ ने भारत की स्वतंत्रता कें बढ़ चढ़ कर भाग लिया। महात्मा गॉधी के साथ भारत की कोकिला के नाम से प्रसिद्ध सरोजनी नायडू सिस्टर निवेदिता सुचिता कृपलानी, भीकाजी कामा, मीरा बेन, कस्तूरबा गाँधी आदि अग्रणी महिलाओं ने भारत के स्वतंत्रता संग्राम में अपना योगदान दिया था।

सदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मध्यप्रदेश पंचायतराज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम 1993।
2. एम. लक्ष्मीकांत ''भारत की शासन व्यवस्था'' पंचम संस्करण मेग्रा हिल एजुकेशन (इंडिया) प्रा. लि. चैन्नई 2018 प्र. 38.2, 39.3,
3. कुंवरसिंह तिलाश – ग्रामीण समाजशास्त्र, पृष्ठ 272.
4. मथुराप्रसाद दुबे – पंचायतीराज समिति प्रतिवेदन, 1972, पृष्ठ 32.
5. कुंवरसिंह तिलाश – ग्रामीण समाजशास्त्र, पृष्ठ 272.
6. विनायक शंकर चरारे – प्रजातांत्रिक विकेन्द्रकीरण, पृष्ठ 5.
7. मुकर्जी राधाकुमुद, लोकल गवर्नमेंट इन एनसिएण्ट इंडिया, ऑक्सफोर्ड क्लेरेण्डन प्रेस, 1920, पृष्ठ –2
8. अवस्थी एवं प्रसासन लक्ष्मीनारायण अग्रवाल आगरा 2001 प्र. 216।
9. डॉ. बाबूलाल फड़िया भारत में लोक प्रशासन साहित्य भवन आगरा 2001 प्र. 538।
10. एस.आर. महेश्वरी ''भारत में स्थानीय शासन लक्ष्मी नारायण अग्रवाल 2000 प्र. 68।

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

परिवारिक पुनर्गठन में परिवार परामर्श केंद्र की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन

डॉ. मीठु (सेन) घोष

परिवार मानव समाज की एक मौलिक इकाई है। मानव समाज का इतिहास परिवार से जुड़ा हुआ है, क्योंकि प्रारंभ से ही मानव किसी न किसी स्वरूप वाले परिवार में रहता चला आया है। आज का मानव कितने ही अनोखे अविष्कार कर रहा हो फिर भी परिवार के विकल्प के रूप में ऐसे किसी भी योग्य समूह या संस्था का अविष्कार अब तक नहीं कर पाया है जिस पर परिवार के आधारभूत कार्यों को निश्चित व निर्भर होकर सौंपा जा सके। वास्तव में परिवार मानवजाति में आत्मसंरक्षण, वंशवर्धन और जातीय जीवन के सातत्य को बनाये रखने का प्रधान साधन है। सन 1917 की प्रसिद्ध क्रांति के उपरांत रूस में परिवार को समाप्त करने का प्रयास किया गया परंतु यह प्रयत्नपूर्ण रूप से असफल रहा। परिवार की सार्वभौमिकता पर मत प्रकट करते हुये गिसबर्ट ने लिखा है, ''यह सबसे अधिक मौलिक एवं सार्वभौमिक समूह है जिसकी अवस्थिति समाज के समस्त राज्यों में पाई जा सकती है।'' परिवार एक समिति एवं संस्था के रूप में सामाजिक संगठन का एक प्रधान अंग है।

वर्तमान आधुनिक समाज में परिवार रूपी यह आधारभूत संस्था ढह रही है। परिणामतः पारिवारक तनाव एवं विघटन एक आम बात हो गई है। इसी तनाव एवं विघटन को रोकने के लिये ''परिवार परामर्श केंद्रों'' को आरंभ किया गया है। इनका कार्य परिवार में उत्पन्न हुये तनाव को दूर करने के साथ–साथ परिवार का पुनर्गठन करना भी है। परिवार परामर्श केंद्र की सबसे अहम विशेषता यह है कि इसके द्वारा विघटित परिवारों को पुनर्गठित कर उन्हें विकास की मुख्य धारा से जोड़ने का प्रया किया जाता है।

परिवार का अर्थ :– एलमर ने अपनी पुस्तक 'परिवार का समाजशास्त्र' में लिखा है कि 'परिवार' शब्द अंग्रेजी भाषा के 'Family' शब्द का हिंदी रूपांतर है। 'Family' शब्द की व्युत्पत्ति लेटिन भाषा के Famulus शब्द से हुई है। Famulus शब्द से अभिप्राय एक ऐसे शब्द से लगाया जाता है, जिसमें माता–पिता, बच्चे, नौकर और यहां तक कि दास भी शामिल किये जाते हैं। वास्तव में इस शाब्दिक अर्थ से परिवार का वास्तविक अर्थ स्पष्ट नहीं होता है। अतः परिवार के अर्थ को हम निम्न परिभाषाओं द्वारा स्पष्ट रूप से समझ सकते हैं।

अमेरिकन ब्यूरो ऑफ सेन्सस के अनुसार ''उन दो या दो से अधिक व्यक्तियों का समूह जो रक्त, विवाह या गोद लिये जाने से संबंधित हो और साथ–साथ रहते हों, ऐसे सभी व्यक्ति एक परिवार के सदस्य माने गये हैं।''

ऑगबर्न एवं निमकॉफ के अनुसार ''जब हम परिवार के बारे में सोचते हैं तो हम इसे बच्चों सहित या बच्चों रहित पति–पत्नि के न्यूनाधिक स्थायी संबंध या बच्चों सहित एक पुरूष या बच्चों सहित एक स्त्री के रूप में चित्रित करते हैं।

फैयर चाईल्ड के अनुसार ''परिवार एक मूलभूत संस्था है जिसमें एक या अधिक पुरूष एक या अधिक स्त्रियों के साथ रहते हैं तथा उनके बीच सामाजिक मान्यता प्राप्त, कम या अधिक स्थायी लैंगिक संबंध होते हैं, साथ ही उसमें सामाजिक मान्यता प्राप्त अधिकारों एवं कर्त्तव्यों की एक प्रणाली होती है, और जो अपने बच्चों के साथ रहते हैं।''

क्लेयर के अनुसार, ''परिवार से हम संबंधों की वह व्यवस्था समझते हैं जो माता–पिता और उनकी संतानों के मध्य पायी जाती है।''

इस परिवार का अभिप्राय ऐसे सामाजिक समूह से लगाया जा सकता है जिसके सदस्य विवाह, रक्त–संबंध अथवा गोद लेने के आधार पर परस्पर संबधित होते हैं, जिसका एक आवास एवं गृहस्थी होती है तथा जिसके सदस्य अधिकार, कर्तव्य एवं उत्तरदायित्व की स्पष्ट व्यवस्था के अंतर्गत एक–दूसरे के साथ अंतःक्रिया एवं व्यवहार करती है।

परिवार का समाजशास्त्रीय महत्व :– बीसेन्स और बीसेन्ज के अनुसार 'परिवार मौलिक और सार्वभौम संस्था है, उस पर प्रत्येक समाज का अस्तित्व निर्भर है।''

एलमर के अनुसार ''आज का मानव कितने ही अनोखे अविष्कार कर रहा है, फिर भी परिवार के अतिरिक्त ऐसे किसी भी योग्य संगठन का अविष्कार अब तक नहीं कर पाया है जिस पर कि परिवार के आधारभूत कार्यों को निश्चित व निर्भर होकर सौंपा जा सके।''

डेवी तथा टफ्ट्स ने परिवार को प्रजाति की शिक्षा तथा संरक्षण की सामाजिक पाठशाला माना है।

परिवार समाज में अनेक प्रकार के महत्वपूर्ण कार्य संपन्न करता है इन महत्वपूर्ण कार्यों को दृष्टिगत रखते हुये परिवार के समाजशास्त्रीय महत्व की विवेचना निम्नानुसार की जा सकती हैः–

- परिवार सदस्यों की सामाजिक प्रस्थिति का निर्धारण करता है। परिवार के द्वारा व्यक्ति को जो निश्चित स्थिति प्रदान की जाती है उसी के अनुरूप वह कार्य संपन्न करता रहता है।
- परिवार व्यक्ति का समाजीकरण करता है। बच्चा परिवार में जन्म लेता है और उसे समाज के योग्य बनाना परिवार का मुख्य कार्य है।
- परिवार सामाजिक नियंत्रण का एक प्रमुख साधन है। परिवार अपने सदस्यों के व्यवहारों पर अनेक प्रकार के नियंत्रण लगाता है, बालक का चरित्र निर्माण परिवार में ही होता है।
- क्यूबर ने भी समाज द्वारा स्थापित नियंत्रणों में पारिवारिक नियमों को सबसे महत्वपूर्ण बतलाया है। पारिवारिक नियम चाहे प्रथागत हो अथवा कानूनी, व्यक्ति के व्यवहारों को नियंत्रित करने में सर्वव्यापी होते हैं।
- परिवार मानव सभ्यता को पीढ़ी दर पीढ़ी पहुंचाने का कार्य भी करता है। परिवार मानव समाज के उन सब अनुभवों को जो सदियों से प्राप्त किये गये हैं, बालक को कुछ ही वर्षों में सिखा देता है।
- परिवार अपने सदस्यों पर अनेक उत्तरदायित्व सौंप देता है। अतः व्यक्ति को बाध होकर पारिवारिक तथा समाजिक नियमों का पालन करना पड़ता है क्योंकि अपने व्यवहारों पर नियंत्रण रखे बिना जीविका के साधन नहीं जुटाये जा सकते।
- परिवार अपने सदस्यों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है। अपंग, बीमार तथा जो व्यक्ति अपना कार्य सुचारू रूप से नहीं कर पाते है, को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है।
- परिवार अपने सदस्यों को जीवन–साथी के चुनाव में भी मदद करता है।
- परिवार अपने सदस्यों को शिक्षा द्वारा भी नियंत्रित रखता है। फिचर के अनुसार, 'पारिवारिक शिक्षा का लक्ष्य अपने सदस्यों को सांस्कृतिक व्यवहारों को सिखाना है तथा सामाजिक नियमों को स्वीकार करने की प्रेरणा देता है।''
- परिवार अपने सदस्यों में प्रेम, सहयोग, स्वार्थ, त्याग, परोपकार, सहिष्णुता, कर्त्तव्यपालन, आज्ञापालन, अनुकूलन आदि सामाजिक गुणों के विकास द्वारा भी नियंत्रित रखता है।
- परिवार व्यक्ति के नैतिक गुणों को प्रोत्साहित करता है और उसके नैतिक गुणों की वृद्धि में भी सहायता करता है।
- परिवार सांस्कृतिक शिक्षा भी प्रदान करता है। बर्गेस एवं लॉक के अनुसार, 'बालक के सांस्कृतिक संबंध में परिवार एक मौलिक साधन है और पारिवारिक परंपरा बालक को प्रारंभिक व्यवहार प्रतिमान एवं आचार का मापदण्ड देती है।
- परिवार समूह के तनावों को दूर करने की यथा संभव कोशिश करता है।
- परिवार अपने सदस्यों में समाज के प्रति कर्तव्यों का ज्ञान कराता है। परिवार ही समाज की नींव है।

पारिवारिक पुनर्गठन का अर्थ :– पारिवारिक पुनर्गठन के पूर्व पारिवारिक संगठन और विघटन का अर्थ जान लेना आवश्यक है। पारिवारिक संगठन वह दशा या स्थिति है जिसमें एक परिवार के विभिन्न सदस्य अपने–अपने पूर्व निश्चित एवं मान्य उद्देश्यों के अनुसार कार्य कर रहे होते हैं।

पारिवारिक संगठन के विपरित वह दशा है या स्थिति है जिसमें परिवार के विभिन्न सदस्य अपने पूर्व निश्चित एवं मान्य उद्देश्यों के अनुसार कार्य नहीं कर रहे होते हैं। जब परिवार की क्रियाशीलता में विषमता और असंतुलन आ जाता है तथा परिवार के सदस्यों के पूर्व निश्चित उद्देश्यों और मूलधारणाओं में मतभेद पैदा हो जाता है तो ऐसी स्थिति को हम पारिवारिक विघटन कहेंगे।

मार्टिन एच. न्यूमेयर के शब्दों में – 'पारिवारिक विघटन का अर्थ परिवार के सदस्यों के मतैक्य और निष्ठा का समाप्त हो जाना अथवा पहले के संबंधों का टूट जाना, पारिवारिक चेतना की समाप्ति हो जाना अथवा पृथकता में विकास हो जाना है।

पारिवारिक विघटन के विपरीत जब यही विघटित परिवार पुनः किसी माध्यम द्वारा जैसे – नातेदारों, पड़ौसियों, मित्रों, परिवार परामर्श केंद्र या इसी प्रकार की अन्य संस्थाओं द्वारा या स्वयं द्वारा ही परिवार को टूटने या बिखरने से बचा कर पुनः परिवार को संगठित कर लिया जाता है और पारिवारिक नियंत्रण, विश्वास, चेतना तथा निष्ठा का संतुलन पुनः वापस आ जाता है और परिवार में पुनः संतुलन उत्पन्न हो जाता है तो उसे हम पारिवारिक पुनर्गठन कहते हैं।

पारिवारिक पुनर्गठन के अर्थ को और अधिक

स्पष्ट करने के लिये इसकी प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख निम्नानुसार किया जा सकता है :–

1. पारिवारिक पुनर्गठन की प्रक्रिया पारिवारिक विघटन के पश्चात उत्पन्न होती है। जहां पारिवारिक संगठन में उद्देश्यों की एकता, व्यक्तिगत आकांक्षाओं की एकता, हितों की एकता, समूह कल्याण की भावना, रूचियों में समानता और भावनात्मक आवश्यकताओं की संतुष्टि पायी जाती है, वहीं पारिवारिक विघटन में बंधनों में शिथिलता, असामंजस्य, सहमति का लोप, पृथ्क्करण, एकमत का लोप, निष्ठा की समाप्ति और पारिवारिक चेतना की समाप्ति पायी जाती है। इन प्रक्रिया से गुजरने के पश्चात परिवार पुनर्गठन की ओर मुड़ता है। पारिवारिक पुनर्गठन में व्यक्ति (पति अथवा पत्नि) चेतना, विश्वास, नियंत्रण, निष्ठा तथा संतुलन को पुनः प्राप्त करता है।
2. प्रत्येक विघटन में यह आवश्यक नहीं कि व्यक्ति (पति अथवा पत्नि) परिवार से अलग होकर ही रहे। क्योंकि हर विघटन से पूर्व परिवार में तनाव और संघर्ष जैसी स्थिति निर्मित होती है। उसके पश्चात ही पारिवारिक विघटन उत्पन्न होता है। कई परिवार ऐसे भी होते हैं। जो कि तनाव और संघर्ष की स्थिति में भी परिवार के साथ ही रहकर अपने तनाव को परिवार के अन्य सदस्यों के साथ मिल कर दूर करने का प्रयत्न करते हैं।
3. पारिवारिक पुनर्गठन में कई पक्ष भी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं, बड़े–बुजुर्ग, परिवार परामर्श केंद्र तथा कुटुम्ब न्यायालय जैसी अन्य संस्थायें अपनी महत्वपूर्ण भूमिकाएं अदा कर करते हैं। यह पक्ष तनाव ग्रसित अथवा विघटित परिवार की समस्याओं को दूर कर उन्हें पुनर्गठित करने की कोशिश करते हैं।
4. पारिवारिक पुनर्गठन को बनाये रखने के लिये व्यक्ति कई चीजों पर नियंत्रण रख कर पुनर्गठन को बनाये रख सकता है, जैसे– क्रोध या आवेग में कोई भी गलत निर्णय न लें। कोई भी निर्णय लेने के पूर्व घर के बड़े–बुजुर्ग और परिवार के अन्य सदस्यों की भी राय लें। कोई भी निर्णय लेने के पूर्व संतान और अपने भविष्य के प्रति भी सोचें। कभी भी सोच को नकारात्मक न रखते हुये सदैव सोच को सकारात्मक रखें।
5. परिवार को संगठित बनाये रखने के लिये सदैव परिवार में एकता बनाये रखें परिवार को कभी भी टूटने न दें और (पति अथवा पत्नि) संतथान तथा परिवार के अन्य सदस्यों को समय एवं सहयोग दें।
6. पारिवारिक पुनर्गठन के द्वारा परिवार में एक दूसरे के हितों की भी रक्षा होती है। पुनर्गठन के पश्चात सभी सदस्य एक दूसरे के हितों का अधिक ध्यान रखने लगते हैं, क्योंकि जब तक व्यक्ति एक–दूसरे के हितों का अधिक ध्यान रखने लगते हैं, क्योंकि जब तक एक परिवार सुखी परिवार नहीं बन पायेगा।
7. पारिवारिक पुनर्गठन के द्वारा व्यक्ति अपने परिवार को तो जोड़ना ही है और साथ ही साथ परिवार को सुखी एवं संगठित बनाये रखने के लिये भी सभी तरह के प्रयास करता है, क्योंकि यदि परिवार में थोड़ी सी भी उदासीनता उत्पन्न हुई तो सदस्यों का एक दूसरे के उपर से विश्वास उठ जायेगा और परिवार पुनः विघटन की ओर जा सकता है।
8. पारिवारिक पुनर्गठन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कि संगठन, विघटन तत्पश्चात पुनर्गठन की प्रक्रिया होती है। पारिवारिक संगठन में व्यक्ति जहां एक नये परिवार को बनाता है अथवा जन्म देता है, वहीं वघटन की स्थिति में परिवार तनाव एवं संघर्ष के दौर से गुजरता है फिर अंततः परिवार पुनर्गठन की ओर लौटता है और अपने परिवार को पुनः संगठित करने के लिये पूरी तरह से प्रयत्नशील रहता है।

पारिवारिक पुनर्गठन की आवश्यकता या महत्व और प्रक्रिया :– पारिवारिक पुनर्गठन की आवश्यकता को हम निम्न प्रकार से समझ सकते हैं –

1. बच्चों के समुचित पालन पोषण, व्यक्तित्व में विकास एवं भविष्य को संरक्षित करने के लिये।
2. पति और पत्नि के व्यक्तित्व में संतुलन बनाये रखने के लिये।
3. पारिवारिक एवं नातेदारी संगठन को संरक्षित एवं प्रभावशील बनाये रखने के लिये।
4. समाज में संगठन और व्यवस्था को संरक्षित एवं प्रभावशील बनाये रखने के लिये।

पारिवारिक पुनर्गठन की प्रक्रिया को हम निम्न प्रकार से समझ सकते हैं :– प्रक्रिया का अभिप्राय अनेक क्रियाओं का परस्पर संबंधित होकर एक व्यवस्था के अंतर्गत क्रम से एक के पश्चात एक के घटित होने से हैं। प्रक्रिया एक निश्चित अवस्था से प्रारंभ होकर एक निश्चित अवस्था तक चलती या क्रियाशील होती है। प्रक्रिया यदि सक्रिय रूप में घटित होती है तो जिस अवस्था से यह प्रारंभ होती है, उसी अवस्था में लौट कर पुनः आ जाती है। उदाहरण के लिये परिवार का संगठित अवस्था से विघटन की अवस्था में जाना तथा विघटन की अवस्था से गुजर कर पुनर्गठन की अवस्था

में जाना और पुनर्गठन की प्रक्रिया से होकर पुनः संगठित अवस्था से संबंधित हो जाना। इसके अंतर्गत कुछ चरणों या अवस्थाओं का उल्लेख आवश्यक है।

1. **प्राथमिक चरण या अवस्था** – इसके अंतर्गत तनाव एवं संघर्ष की स्थिति से जुड़े व्यक्ति (विशेष रूप से पति और पत्नि) तनाव एवं संघर्ष से निकलने वाले दुष्परिणामों के बारें में विचार एवं अनुभव करते हैं।
2. **द्वितीय चरण या अवस्था** – इसके अंतर्गत तनाव एवं संघर्ष से पीड़ित पति एवं पत्नि स्वयं को मानसिक रूप से इस बात के लिये तैयार करते हैं कि तनाव एवं संघर्ष से उन्हें कोई लाभ होने वाला नहीं है, अतः इस अस्वस्थ एवं प्रतिकूल स्थिति को निष्प्रभावी करने के लिये उन्हें प्रयास करना ही चाहिये। ऐसी मानसिक स्थिति निर्मित होने के पश्चात पति और पत्नी दोनों ही अपने–अपने स्तर पर ऐसे माध्यम की तलाश करते हैं जिसके द्वारा तनाव अथवा संघर्ष को दूर किया जा सके।
3. **तृतीय चरण या अवस्था** – इसके अंतर्गत समस्या का समाधान ढूंढने के लिये बातचीत की प्रक्रिया प्रारंभ की जाती है। बातचीत की शुरूआत माध्यम के द्वारा ही की जाती है। यह माध्यम परिवार परामर्श केंद्र भी हो सकता है।
4. **चतुर्थ एवं अंतिम चरण या अवस्था** – इसके अंतर्गत पति और पत्नी दोनों ही सहमति के सामान्य बिंदुओं, आधारों या शर्तों को स्वीकार कर लेते हैं।

पारिवारिक पुनर्गठन की विधियां :– पारिवारिक पुनर्गठन की कुछ महत्वपूर्ण विधियों का उल्लेख निम्नानुसार हैं–

1. **पति और पत्नी में त्याग की प्रवृति का का विकास** – तनाव एवं संघर्ष की तीव्रता को कम अथवा समाप्त करने का एक कारगर तरीका या विधि यह है कि पति और पत्नि अपनी इच्छाओं एवं उद्देश्यों को एक दूसरे के अनुरूप बनाये।
2. **कुछ समय के लिये पति एवं पत्नी द्वारा स्थान परिवर्तन के माध्यम से एक दूसरे से दूर हो जाना** – इस प्रक्रिया के अंतर्गत यदि पति एवं पत्नी कुछ समय के लिए अन्यत्र कहीं चले जाते हैं या अपना स्थान परिवर्तन कर लेते हैं तो तनाव एवं संघर्ष की स्थिति टल जाती है और विघटन की प्रक्रिया में आगे बढ़ रहे परिवार के नये रूप में पुनर्गठित होने की संभावना प्रबल हो जाती है।
3. **परिवार एवं विवाह जैसे महत्वपूर्ण संस्था की उपयोगिता एवं प्रभाव से पति एवं पत्नी को परिचित करवाना** – नाते–रिश्तेदार, परिवार परामर्श केंद्र या इस प्रकार की किसी अन्य एजेंसी के द्वारा जब पति और पत्नि को इन संस्थाओं की महत्ता से परिचित करवाया जाता है तो निश्चित ही वे तनाव व संघर्ष परित्याग कर एक दूसरे के साथ नई उर्जा के साथ पारिवारिक जीवन व्यतीत करने के लिये तैयार हो जाते हैं।
4. **पति और पत्नी में समझौते की शुरूआत करने के साथ बातचीत की आवृत्ति का बढ़ाना** – पति और पत्नी में समझौते की शुरूआत करने के साथ बातचीत की आवृत्ति को यदि बढ़ा दिया जाय तो तनाव एवं संघर्ष से प्रभावित परिवार को पुनर्गठित करने में यह एक काारगर भूमिका साबित हो सकती है।
5. **महत्वपूर्ण नजदीकी व्यक्तियों एवं नातेदारों के माध्यम से पति और पत्नी की समस्याओं का समाधान** – कभी–कभी अति महत्वपूर्ण व्यक्तियों अथवा नातेदारों की राय, परामर्श एवं मध्यस्था को अस्वीकार या उपेक्षा करना संभव ही नहीं होता है। अतः ऐसे व्यक्ति तो पति और पत्नी को एक साथ लाने तथा टूटते परिवार को पुनर्गठित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका संपन्न कर ही सकते हैं।

पारिवारिक पुनर्गठन को प्रोत्साहित करने वाले कारक :– पारिवारिक पुनर्गठन को प्रोत्साहित करने वाले कुछ कारकों का उल्लेख निम्नानुसार है–

1. **मधुर एवं सुखी पारिवारिक जीवन की यादें** – यदि परिवार में तनाव एवं संघर्ष की स्थिति निर्मित हो जाये तब ऐसी स्थिति में मधुर एवं सुखी पारिवारिक जीवन की यादें आना स्वाभाविक ही है। अतः यह पारिवारिक पुनर्गठन को प्रोत्साहित करने का एक प्रमुख माध्यम है।
2. **संतान के प्रति लगाव और चिंता** – यदि पति और पत्नी में तनाव एवं संघर्ष की स्थिति निर्मित होती है और इससे परिवार के टूटने की संभावना बढ़ जाती है तो ऐसे परिवार को पुनर्गठित करने में संतान के प्रति प्यार और चिंता की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है।
3. **आवश्यकताओं की सामान्य पूर्ति एवं संतुष्टि में गतिरोध के प्रति चिंता** – पति और पत्नि दोनों में ही आवश्यकताओं की सामान्य पूर्ति एवं संतुष्टि में तनाव एवं संघर्ष के कारण संभावित गतिरोध तथा उससे उत्पन्न चिंता भी टूटते परिवार को पुनर्गठित करने में सहायक होती है।
4. **एकाकी जीवन का भय** – पति और पत्नि में यदि तनाव संघर्ष बढ़ता है तथा उनके संबंध टूटते

हैं तो निश्चित ही उन्हें एकाकी जीवन व्यतीत करने के लिये बाध्य होना पड़ेगा। ऐसे विचार से अभिप्रेरित होकर वे तनाव और संघर्ष के रास्ते का परित्याग कर परिवार को पुनर्गठित करने के लिये प्रयास कर सकते हैं।

5. **नातेदारी, पड़ोस एवं परिचित समूह के व्यक्तियों की टीका टिप्पणी एवं उपेक्षापूर्ण व्यवहार** – यदि पति और पत्नि के आपसी संबंध तनाव एवं संघर्ष से प्रभावित हो और उनमें लड़ाई–झगड़े तथा गाली–गलोच आये दिन होते हों तो उनके प्रति नातेदारी, पड़ोस एवं परिचित समूह के सदस्यों का व्यवहार सामान्य न होकर कुछ नकारात्मक हो जाता है। इन स्थितियों को विचार में रखते हुये पति और पत्नी तनाव और संघर्ष को बढ़ाने की बजाए उसे समाप्त करने के लिये ही प्रयास करेंगे ताकि उनके प्रति समूह के सदस्यों का सामान्य व्यवहार एवं सामान्य स्वीकृति यथावत बनी रहे।

पारिवारिक पुनर्गठन में विभिन्न पक्षों की भूमिका–

1. **पति और पत्नि की स्वयं की भूमिका** – यदि पति और पत्नी में संघर्ष होता है तो सर्वप्रथम पति–पत्नि में से कोई एक अथवा कभी–कभी दोनों ही अपने स्तर पर संघर्ष को टालने की पहल करते हैं ताकि परिवार टूटने की बजाय पुनर्गठित हो जाये।
2. **अभिभावकों की भूमिका** – तनाव एवं संघर्ष से पीड़ित परिवार को पुनर्गठित करने में अभिभावकों की भूमिका विशेष महत्व की होती है। कभी–कभी अभिभावक परामर्श का प्रयोग करने के साथ डॉट–फटकार का भी प्रयोग कर लेते हैं जो पति–पत्नि में संघर्ष को समाप्त कर उनमें मेल–मिलाप करवाने की दृष्टि से अधिक कारगर हो जाता है।
3. **नातेदारी समूह के सदस्यों की भूमिका** – यदि पति और पत्नी में तनाव एवं संघर्ष की स्थिति निर्मित होती है और इससे उनके परिवार के टूटने का खतरा पैदा हो जाता है तो नातेदारी समूह के सदस्य तनाव एवं संघर्ष को दूर करने तथा परिवार को पुनर्गठित करने में कभी–कभी प्रभावशाली भूमिका संपन्न करते हैं।
4. **मित्र, सहकर्मी एवं पड़ोसी की भूमिका** – पति एवं पत्नि में तनाव एवं संघर्ष की स्थिति निर्मित होने पर परिवार को पुनर्गठित करने की दृष्टि से इन समूहों के व्यक्तियों की भूमिका भी कभी–कभी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।
5. **परिवार परामर्श केंद्र की भूमिका** – पारिवारिक पुनर्गठन में परिवार परामर्श केंद्र की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। केंद्र के कार्यकर्ता एकाधिक बैठकों में सदस्यों की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने एवं परिवार को पुनर्गठित करने के लिये हर संभव प्रयास करते हैं।
6. **समाज सेवा केंद्रों की भूमिका** – परिवार परामर्श केंद्र की तरह समाज में क्रियाशील अनेक समाजसेवी संस्थायें हैं जो महिलाओं तथा परिवार की अनेक समस्याओं का समाधान करते हुये प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से परिवार के पुनर्गठन में अपना योगदान देते हैं।
7. **न्यायालय की भूमिका** – न्यायालय विवाह – विच्छेद अर्थात तलाक को अंतिम विकल्प के रूप में प्रयोग में लाता है। न्यायालय पति और पत्नी को इस बात के लिये पर्याप्त अवसर प्रदान करता है कि वे अपने विवाद को स्वयं निपटा कर पुनः सुखमय पारिवारिक जीवन व्यतीत करें। इस प्रकार परिवार को पुनर्गठित करने में न्यायालय की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

विवाह – विच्छेद की आवश्यकता कब :– विवाह–विच्छेद से पूर्व विवाह की अवधारणा को समझाना आवश्यक है। विवाह एक विश्वव्यापी संस्था है जिसके अभाव में परिवार के निर्माण के संबंध में सोचा भी नहीं जा सकता। गिलिन एवं गिलिन के अनुसार–'विवाह एक प्रजनन मूलक परिवार की स्थापना की समाज द्वारा स्वीकृत विधि है।' इसके विपरीत विवाह–विच्छेद वह अवस्था है जिसमें पति पत्नि एक दूसरे के साथ किसी भी अवस्था में रहने के लिये तैयार नहीं होते है। यह कारण कुछ भी हो सकते हैं जैसे – बैरोजगारी, आर्थिक तंगी, क्लेश, मनमुटाव, विचारों में तालमेल या सामंजस्य न होना आदि ऐसे कई अनेक कारण हो सकते हैं जिससे कि दोनों पक्ष एक दूसरे के साथ रह कर प्रसन्न नहीं हो सकते और आपस में अलग रहने का फैसला करते हैं। इसे हम विवाह–विच्छेद कहते हैं। विवाह–विच्छेद के अध्ययनों ने यह सिद्ध कर दिया है कि नगरों में विवाह–विच्छेद अधिक होते हैं। चूंकि भारत में औद्यागीकरण और नगरीकरण की प्रक्रियाओं के फलस्वरूप ऐसी दशाएं उत्पन्न हो रही हैं, जिनमें स्थिर पारिवारिक जीवन संभव नहीं है, इस वजह से भी विवाह–विच्छेद की आवश्यकता समझी जाती है।

परंतु विवाह–विच्छेद के कुछ दुष्प्रभाव भी होते हैं जैसे – पति–पत्नि के व्यक्तित्व पर दुष्प्रभाव, बच्चों

के व्यक्तित्व पर दुष्प्रभाव, परिवार के अन्य सदस्यों एवं पारिवारिक व्यवस्था पर दुष्प्रभाव, समाज पर दुष्प्रभाव, समाज पर दुष्प्रभाव। विवाह–विच्छेद के दुष्प्रभाव अति घातक व्यापक एवं दूरगामी होते हैं। इस वास्तविकता को स्वीकारते हुए तनाव एव विघटन से प्रभावित परिवार को सर्वप्रथम सार्थक प्रयास कर पुनर्गठित करना चाहिए। पारिवारिक पुनर्गठन के प्रयास की प्रक्रिया में अन्य किसी विकल्प के संबंध मे विचार किये जाने की आवश्यकता है ही नहीं। यदि किसी भी रूप में परिवार का पुनर्गठित होना संभव नहीं है तो ही विच्छेद के लिये पहल करने के संबंध में विचार करना चाहिए।

अध्ययन का उद्देश्य :– तनाव, संघर्ष तथा विघटन की समस्याओं से पीड़ित परिवारों को पुनर्गठित करने में परिवार परामर्श केंद्रो की भूमिका किस सीमा तक प्रभावशाली है तथा परिवार परामर्श केंद्रों एवं इससे जुड़े कार्यकर्ताओं की भूमिका को तनाव से पीड़ित परिवार के सदस्य किस रूप में स्वीकार करते हैं इनसे संबंधित तथ्यो का पता तब तक नहीं चल सकता जब तक इस संदर्भ में शोध का सहारा न लिया जाय। किसी भी स्थिति के संदर्भ में सामान्य धारणा अच्छी अथवा बुरी किसी भी प्रकार की हो सकती है, परंतु उस स्थिति के संबंध मे वास्तविकता क्या है, इसका पता या खुलासा केवल शोध के द्वारा ही संभव है। शोध के द्वारा ही सत्य से साक्षात्कार होता है। इस धारणा को स्वीकार करते हुये पारिवारिक पुनर्गठिन मे परिवार परामर्श केंद्र की भूमिका को जानने के लिये प्रस्तुत शोध कार्यों को निम्न प्रमुख उद्वेश्यों पर केंद्रित कर संपन्न किया गया है :–

1. परिवारिक तनाव के स्वरूप और पारिवारिक संबंधों पर उनके प्रभाव का अध्ययन करना।
2. परिवारिक तनाव के कारणों का अध्ययन करना।
3. परिवारिक पुनर्गठन को सुनिश्चित करने वाले कारकों एवं विधियों का अध्ययन करना।
4. परिवारिक पुनर्गठन में परिवार सलाहकार केंद्र की भूमिका का अध्ययन करना।
5. परिवार सलाहकार केंद्रो के संगठन एवं संचालन की प्रक्रिया का अध्ययन करना।
6. परिवार परामर्श केंद्र पर कार्यरत व्यक्तियों के अधिकारों, भूमिकाओं तथा संबंधित समस्याओं का अध्ययन करना।
7. परिवारिक पुनर्गठन में परिवार परामर्श केंद्र की भूमिका को और अधिक सार्थक तथा प्रभावशाली बनाने के लिये उपयुक्त सुझाव प्रस्तुत करना।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. अग्रवाल, जी.के. 1989 'समाजशास्त्र भाग–1' साहित्य भवन पब्लिशर्स, आगरा।
2. जैन, बी.एम. 1990 'शोध प्रविधि एवं क्षेत्रीय तकनीक, रिसर्च पब्लिकेशन, जयपुर।
3. नागर, कैलाशनाथ सांख्यिकी के मूल तत्व।
4. बोगार्डस सोशियोलॉजी।
5. सिंह एस.डी 1998 वैज्ञानिक सामाजिक अनुसंधान एवं सर्वेक्षण के मूल तत्व, कमल प्रकाशन इंदौर।
6. सुरेंद्र सिंह 1975 सामाजिक अनुसंधान, उत्तरप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, लखनउ, खंड–1.
7. श्रीवास्तव, ए.आर.एन. सिन्हा, आनन्द कुमार 1999 सामाजिक अनुसंधान, के.के. पब्लिकेशन्स 875 कटरा, इलाहाबाद।
8. बोगार्डस – सोशियोलॉजी।
9. सिंह, साधु – रिसर्च मैथेडोलॉजी समाज विज्ञान, हिमालया प्रकाशन हाउस, मुम्बई।
10. सत्यदेव 1976 सामाजिक विज्ञानों की शोध पद्धतियां, हरियाणा हिंदी ग्रंथ अकादमी, चंडीगढ़।

Unnati International Journal of Multidisciplinary Scientific Research, U.I.J.M.S.R.
Peer Reviewed - Refereed Journal & Impact factor - 3.2, Open Access, Double Blind, Monthly Online Journal
ISSN : 2581-8872, Vol. : 2, No. : 1, Feb. - 2020
2020

विभिन्न विधाओं के संगीतज्ञ एवं उनकी रचनात्मकता

डॉ. अनुराधा सिंह

रचनात्मकता को कई तरह से परिभाषित किया गया है। जहाँ कुछ विद्वानों ने इसे व्यक्ति की ऐसी योग्यता के रूप में माना है, जो उसे किसी नई चीज को प्रकाश में लाने में सहायता देती है, (Barron 1969, Kogan and Wallach 1965) वहीं अन्य लोगों ने इसे योग्यता के रूप में नही मानकर एक ऐसी मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया के रूप मे माना है। जिससे नूतन एवं मूल्यवान रचनाएँ प्रकट होती हैं। (Harman 1958, Stein 1963, Fromn 1959) ने रचनात्मकता को विलक्षण प्रतिभा, असंगति एवं तनाव को सहन करने की क्षमता, नूतनता के प्रति स्वंय को अभियुक्त करना, अनुभूति बोध तथा ऐसे बोध से पूरा–पूरा लाभ उठाने की क्षमता के रूप में परिभाषित किया है। रचनात्मकता के संदर्भ में दी गई इन विभिन्न परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि रचनात्मकता व्यक्ति की उस क्षमता को कहा जाता है, जिससे वह कुछ ऐसी नई चीजों, रचनाओं या विचारों को पैदा करता है, जो नया होता है अर्थात जो पहले से उसे ज्ञात नहीं होता। यह निश्चित रूप से उद्देश्यपूर्ण या लक्ष्य निदेर्षित होता है न कि एक निराधार स्वप्नचित्र के समान होता है। यह वैज्ञानिक, कलात्मक या साहित्यिक रचना के रूप में हो सकता है। रचनात्मक चिंतन का स्वरूप काफी जटिल होता है – इसमें व्यक्ति किसी समस्या के भिन्न–भिन्न पहलुओं पर भिन्न–भिन्न दिशाओं में चिन्तन कर कुछ नए विचारों एवं तथ्यों की रचना करता है। रचनात्मक व्यवहार में रचना तथा प्रक्रिया दोनों ही महत्वपूर्ण होते हैं। बिना प्रक्रिया के किसी भी रचना की कल्पना नहीं की जा सकती है। Torrance (1965) ने रचनात्मक को ऐसी प्रक्रिया के रूप में माना है, जो विभिन्न समस्याओं कमियों, ज्ञान की रिक्तियों, किसी उद्वीपक में छूटे हुए तत्वों आदि के प्रति व्यक्ति को संवेदनशील बनाती है। इस तरह रचनात्मकता हमें कठिनाई की जानकारी देती है एवं विभिन्न समस्याओं के समाधान ढूँढ़ निकालने में सहायता प्रदान करती है। Torrance द्वारा रचनात्मकता की दी गई परिभाषा ज्ञान की सभी विधाओं के लिए सामान्य रूप से उपयोगी मानी जाती है, चाहे वह गणित हो अथवा विज्ञान, भाषा हो अथवा कला। यह परिभाषा रचनात्मकता को दैनिक जीवन से जोड़ती है।

ऐसा माना गया है कि उच्च रचनात्मक विशेषता रखने वाले लोगों में दृढ़ निश्चय, व्यक्तिवादिता, निर्णय एवं चिन्तन की स्वतंत्रता, सुंदरता की परख, जिज्ञासा, कल्पनात्मक चिंतन आदि विशेषताएँ देखी जाती हैं (Stein and Heinz a; 1960, Barron, 1961,1963) इन सभी विशेषताओं का संगीत के क्षेत्र मे भी काफी महत्व है। विभिन्न अध्ययनो यथा–इड्युसन (1958), प्रज्ञानंद (1979) राय चौधरी (1961), टेलर (1959), वाल्टर (1961) और वील्फे (1936) आदि से पता चलता है कि संगीतज्ञों में रचनात्मक योग्यता सबसे ज्यादा होती है, रायचौधरी (1975) के एक और अध्ययन से पता चलता है कि संगीतज्ञों में रचनात्मकता पर्याप्त मात्रा में होती है। उनकी सोंच और उनकी अभिव्यक्ति वास्तविकता से भिन्न होती है। वे समान्यतया वास्तविकता की सीमा मे रहकर भी रंग बिरंगी कल्पनाओं को अधिक महत्व देते हैं। वे उत्सुकताओं सं अलग हटकर उन क्रियाओं और अभिव्यक्तियों पर ध्यान देते हैं, जो अद्वितीय होती हैं। स्टेन (1935) ने भी माना है कि संगीतज्ञों मे रचनात्मकता उच्च स्तर पर पाई जाती है। फ्रेंकलिन (1956) ने अपने अध्ययन मे लिखा है कि सांगीतिक योग्यता के दो रूप है – (1) यांत्रिक ध्वनि (2) रचनात्मक सांगीतिक योग्यता, उनके अध्ययन के आधार बेसम एट (1974) रेवेज (1954) और रोड्रिक (1963) ने भी सांगीतिक योग्यता और रचनात्मकता के परस्पर संबंध पर प्रकाश डाला है। कुछ ऐसे ही निष्कर्ष परमेश और नारायण (1976) के अध्ययन से भी प्राप्त होते हैं। उनके अनुसार रचनात्मकता किसी भी संगीतज्ञ की सांगीतिक योग्यता को विशेष रूप से प्रभावित करती है। अर्थात जिनमें रचनात्मक योग्यता जितनी ज्यादा होगी उनका प्रदर्शन उतना ही बेहतर होगा।

उपर्युक्त अध्ययनों से यह बात स्पष्ट होती है कि रचनात्मकता का सांगीतिक योग्यता से गहरा संबंध है। परंतु जिस प्रकार संगीत की विभिन्न विधाएँ एक दूसरे से भिन्न हैं, निश्चित रूप से उनसे संबंधित संगीतज्ञों के रचनात्मक गुणों में भी भिन्नताएँ होगी। इसी संदर्भ में किए गए एक शोध, ''भारतीय संगीत की विभिन्न विधाओं के गायक एवं उनकी विशेषताएँ एक विश्लेषण – अनुराधा सिंह (2013)'' से प्राप्त निष्कर्षों से यह पता चलता है कि रचनात्मकता एवं उसके विभिन्न आयामों के संदर्भ में संगीत को विभिन्न विधाओं के संगीतज्ञों में कोई विशेष अंतर नहीं है, किन्तु अंको के आधार पर यह बात भी स्पष्ट होती है कि सबसे अधिक

रचनात्मकता शास्त्रीय संगीत तथा सबसे कम लोक संगीत के गायकों में पाई जाती है। इस प्रकार यह परिणाम कहीं न कहीं उन अध्ययनों (Bess met; 1974, Par mesh and Narayan; 1976, Prajnanand; 1979) से सहमति प्रकट करता है, जिनमें यह बताया गया है कि शास्त्रीय संगीतज्ञों में रचनात्मकता उच्च स्तर में पाई जाती है। शास्त्रीय संगीत के उपरांत यह स्तर उप शास्त्रीय अथवा सुगम संगीत के संगीतज्ञों मे पाया जाता गया। इसके अन्तर्गत ठुमरी, भजन, गजल आदि गायन शैलियाँ आती है। इसके बाद रचनात्मकता का स्तर चित्रपट संगीत के संगीतज्ञों में देखा गया है। यह वह संगीत है जिसमें संगीत की सभी विधाओं का मिश्रण देखने को मिलता है, इसमे कहानी एवं किरदारों के अनुसार संगीतकार को गीतों की रचना करनी होती है, परन्तु इन गीतों की रचना मे भी प्रायः शास्त्रीय रागो का हीं आधार लिया जाता है। इन तीनो विधाओं की तुलना मे लोक संगीत के संगीतज्ञों की रचनात्मकता का स्तर कुछ कम पाया गया। इसका एक मुख्य कारण यह हो सकता है कि हमारा लोकसंगीत हमारी प्राचीन परंपरा और संस्कृति से जुड़ा हुआ है। इसमें प्रयुक्त गीतों के बोल एवं धुन कई पीढ़ियों से उसी रूप मे गाए जा रहे हैं। लोकसंगीत किसी भी देश की वह सांस्कृतिक धरोहर है, जिसे एक पीढी दूसरी पीढ़ी को सौपती है। अतः लोकगायकों में रचनात्मकता का गुण होना इतना आवश्यक नहीं और उन्हें यह गुण प्रदर्षित करने का मौका भी कम ही प्राप्त होता है। इस प्रकार इस शोध में भारतीय संगीत की विभिन्न विधाओं के संगीतज्ञों की रचनात्मकता का स्तर जानने का प्रयास किया गया, परंतु इससे प्राप्त परिणाम पूर्णरूपेण पूर्व अध्ययनों का समर्थन नहीं करते क्योंकि रचनात्मकता एवं उसके विभिन्न आयामों के संदर्भ में इन चारों समूहों द्वारा प्राप्त अंको पर यदि विचार करें तो किसी ने भी इस दिशा में एक उत्साहवर्द्धक चित्र उपस्थित नहीं किया है। रचनात्मकता को एक संवेदनशील विशेषता के रूप में माना गया है। परमेश (1971) के अनुसार रचनात्मकता के मानक प्रतिदर्श के स्वरूप, अध्ययन की दशा एवं पद्धतियाँ आदि मे थोड़े भी परिवर्तन आने से रचनात्मकता का सही–सही मूल्यांकन नहीं हो पाता। यह अध्ययन भी उस परिस्थिति में किया गया जहाँ पूर्ण नियंत्रण संभव नहीं था। जिसके चलते संभवतः सभी समूहों में रचनात्मकता तथा उसके आयामों की निम्न मात्रा देखी गई। इसका एक कारण यह भी माना जा सकता है कि संगीतज्ञ प्रायः अपने संगीत की दुनिया तक ही सीमित रहते हैं। किसी अन्य क्षेत्र में उनकी विशेष रूचि नहीं रहती। जिस कारण उनमें रचनात्मकता के गुणों का विकास पूर्ण रूप से नहीं हो पाता। परन्तु संगीत के क्षेत्र में वे अपनी रचनात्मकता का पूर्ण प्रदर्शन करते हैं। संगीत के मुख्य 12 स्वरों से विभिन्न प्रकार की बंदिशों की रचना करना उनकी रचनात्मकता का प्रमुख गुण है।

संदर्भ सूची :–

(1) शोध प्रबंध– 'भारतीय संगीत की विभिन्न विधाओं के गायक एवं उनकी विशेषताएँ : एक विश्लेषण', डॉ० अनुराधा सिंह (2013), ति० मा० शा० वि० भागलपुर

(2) Barron, F (1979) – Creative Persons and Creative Process New York : Rinehart & Winston

(3) Baron, F (1963) – Creativity and Psychological health

(4) Fromn, E (1959) – The Creative attitude. New York: Harper and Row

(5) Parmesh, C.R. (1970) – Value Orientation of Creative Persons. Psychological Studies, 15,108-112

(6) Prajnanad, SA (1979) – Music it's form, function and value Delhi : Munishram Monoharlal Publishers.

(7) Ray Chaudhari, M (1960) – Studies in artistic, creativity Calcutta : Ravindra Bharti

(8) Stein, M.I. (1962) – Creativity and the individual. The Free press of Glencoe Illinos.